संजय की कलम से ..

श्रीकृष्ण का जन्म और जीवन पूर्ण पवित्र था

श्री कृष्ण जन्माष्टमी के दिन श्रीकृष्ण का जन्मदिन भारत के हर नगर में बहुत ही उत्साह और उल्लास से मनाया जाता है। इस दिन स्थान-स्थान पर देवताओं में श्रेष्ठ श्रीकृष्ण की मधुर चर्चा होती है। भारतवासियों को श्रीकृष्ण बहुत प्रिय हैं क्योंकि उनकी सतोगुणी काया, सौम्य चितवन, हर्षितमुखता और उनका शीतल स्वभाव सबके मन को मोहने वाला था।

श्रीकृष्ण का जन्म 'धन्य' था

श्रीकृष्ण के जन्म को लोग बहुत ही धन्य मानते हैं और इस कारण उनके जन्म-स्थानादि का वर्णन भी 'धन्य मथुरा', 'धन्य गोकुल' इत्यादि शब्दों से करते हैं। उनके जन्म, उनकी किशोरावस्था और बाद के भी सारे जीवन को लोग दैवी जीवन मानते हैं। उन्हें श्रीकृष्ण इतने महान और प्यारे लगते हैं कि 'मोर मुकुट धर मुरली सोहे' आदि पदों से वे उनके शृंगार का भी वर्णन करते हैं। परंतु फिर भी श्रीकृष्ण के जीवन में जो मुख्य विशेषतायें थीं और जो अनोखे प्रकार की महानता थी उसको लोग आज यथार्थ रूप में और स्पष्ट रीति से नहीं जानते। उदाहरण के तौर पर वे यह नहीं जानते कि श्रीकृष्ण का व्यक्तित्व इतना आकर्षक क्यों था और वे पूज्य श्रेणी में क्यों गिने जाते हैं? पुनश्च, उन्हें यह भी ज्ञात नहीं है कि श्रीकृष्ण ने उस उत्तम पदवी को किस उत्तम पुरुषार्थ से पाया। अत: हम यहाँ उन रहस्यों का संक्षिप्त वर्णन करेंगे क्योंकि उनका ज्ञान अत्यावश्यक है।

गायन योग्य और पूजने योग्य जीवन में अन्तर

किसी नगर या देश की जनता जन्मदिन उन्हीं का ही मनाया करती है जिनके जीवन में कुछ महानता रही हो। परंतु आप देखेंगे कि महान व्यक्ति भी दो प्रकार के हुए हैं। एक तो वे जिनका जीवन जन-साधारण से काफी उच्च तो था परंतु फिर भी उनकी मनसा पूर्ण

अमृत-सूची

- यंत्रवत् और.. *(सम्पादकीय)*. 5
- 'पत्र' संपादक के नाम..... 8
- प्रश्न हमारे, उत्तर दादी जी के. 9
- पुरुषोत्तम संगमयुग और.....11
- भगवान - पुत्र रूप में..... 14
- राजयोग द्वारा वृत्ति परिवर्तन...17
- दुखों से छुड़ाया शिव बाबा ने. 19
- दोस्त हो तो ऐसा.....20
- ग्लोबल हॉस्पिटल में.....22
- भटके राही को मंज़िल.....23
- महिला सशक्तिकरण..... 25
- बदलिए दुख को सुख में.....26
- संगठन की मज़बूती..... 28
- सचित्र सेवा समाचार..... 30
- कर्मों की गुह्य गति..... 32
- क्रोध बने अवरोध *(कविता)*. 33
- सचित्र सेवा समाचार..... 34

नये सदस्यता शुल्क

भारत	वार्षिक	आजीवन
ज्ञानामृत	80 /-	2,000/-
वर्ल्ड रिन्युअल	80/-	2,000/-
विदेश		
ज्ञानामृत	750 /-	8,000/-
वर्ल्ड रिन्युअल	750/-	8,000/-

- शुल्क के लिए सम्पर्क करें -
09414006904, 09414154383

ब्रह्माकुमारी लच्छू दादी
जन्म तिथि: 08-02-1930
देहावसान: 14-08-2010

श्रद्धांजली

प्यारे साकार मात-पिता के हस्तों से पली, दादियों की छत्रछाया में बड़ी हुई यज्ञ की आदि रतन, हम सबकी स्नेही लच्छू दादी जो कि 6 वर्ष की छोटी आयु में बोर्डिंग में आई, सदा बाबा के अंग-संग रही। साकार ब्रह्मा बाबा और दीदी मनमोहिनी जी की विशेष स्थूल में हर प्रकार की सम्भाल करते अपनी अथक सेवायें देती रहीं। सतगुरुवार का भोग भी बहुत एक्यूरेट तैयार कर क्लास में लाती और कई डिपार्टमेन्ट में बहुत अलर्ट होकर अन्त तक सेवायें करती रहीं। कभी किसी से भी सेवा नहीं ली। ऐसी अथक सेवाधारी लच्छू दादी 14 अगस्त 2010 सवेरे अमृतवेले 3.45 बजे अपना पुराना शरीर छोड़ बापदादा की गोद में समा गई। पूरा ही ब्राह्मण परिवार ऐसी समर्पित बाबा के अनन्य रत्न को योग के सूक्ष्म वायब्रेशन के साथ अपनी श्रद्धांजली अर्पित करता है।

अविकारी न थी, उनके संस्कार पूर्ण पवित्र न थे, वे विकर्माजीत भी न थे और उनकी काया सतोप्रधान तत्वों की बनी हुई न थी। उन्हें देवता नहीं माना जा सकता क्योंकि उनका जन्म अपवित्र रीति (मैथुनी रीति) से हुआ था। कुछ विशेष गुणों और कर्त्तव्यों के कारण ऐसे व्यक्तियों का गायन तो सारे संसार में होता है परंतु पूजन नहीं होता क्योंकि पूजा केवल देवी-देवताओं की या देवों के देव परमपिता परमात्मा ही की होती है। दूसरे प्रकार के व्यक्ति वे हैं जो पूर्ण निर्विकारी थे; जिनके संस्कार सतोप्रधान थे और जिनका जन्म भी पवित्र एवं धन्य था अर्थात् कामवासना के परिणामस्वरूप नहीं बल्कि योगबल से हुआ था। ऐसे व्यक्तियों को देवता कहा जाता है; उनका जीवन गायन योग्य भी होता है और पूजन योग्य भी। श्रीकृष्ण और श्रीराम ऐसे ही पूजन योग्य व्यक्ति थे जबकि गांधी जी तथा अन्यान्य महात्माओं इत्यादि का जीवन केवल गायन-योग्य था।

ध्यान देने के योग्य बात है कि पहली प्रकार के व्यक्तियों के जीवन बाल्यकाल से ही गायन या पूजने के योग्य नहीं होते बल्कि वे बाद में कोई उच्च कार्य करते हैं जिसके कारण देशवासी या नगरवासी उनका जन्मदिन मनाते हैं। परंतु श्रीकृष्ण तथा श्रीराम आदि देवता तो बाल्यावस्था से ही महात्मा थे; वे कोई संन्यास करने या शिक्षा-दीक्षा लेने के बाद पूजने के योग्य नहीं बने। आपने देखा होगा कि उनके बाल्यावस्था के चित्रों में भी उनको प्रभामण्डल से सुशोभित दिखाया जाता है जबकि अन्यान्य महात्मा लोगों को संन्यास करने के पश्चात् अथवा किसी विशेष कर्त्तव्य के पश्चात् ही प्रभामण्डल दिया जाता है। श्रीकृष्ण की किशोरावस्था को भी इसी कारण से मातायें बहुत याद करती हैं और भगवान से प्रार्थना करती हैं कि यदि बच्चा हो तो श्रीकृष्ण जैसा। श्रीकृष्ण किशोर में तथा अन्य किशोरों में यही तो अंतर है कि श्रीकृष्ण की काया सतोप्रधान तत्वों की बनी हुई थी, वे पूर्ण पवित्र संस्कारों वाले थे और उनका जन्म योगबल द्वारा हुआ था। पवित्र जीवन होने के कारण ही तो श्रीकृष्ण के जन्मकाल में ही उनकी माता को विष्णु चतुर्भुज का दिव्य साक्षात्कार हुआ था। अन्य महात्माओं इत्यादि के जन्म का, दिव्य दृष्टि से साक्षात्कार नहीं हुआ।

श्रीकृष्ण के 'मोर-मुकुट' से उनकी पवित्रता सिद्ध है।

मोर-पंख पवित्रता का प्रतीक है। धर्मग्रंथों पर कई लोग जो चंवर घुमाते हैं, वे भी मोर-पंखों के बने होते हैं। अपनी पुस्तकों में भी कई लोग मोर-पंख रखते हैं। इसका कारण यही है कि बहुत लोग मोर को पवित्र पक्षी मानते हैं। श्रीकृष्ण के मुकुट में मोर-पंख इसी रहस्य के प्रतीक हैं कि वे पूर्ण पवित्र थे; उनका जन्म मैथुनी रीति से अथवा काम-वासना के भोग से नहीं हुआ था।

इसके अतिरिक्त प्रभामण्डल भी निर्विकारिता का सूचक है। 'श्री' की उपाधि से भी सिद्ध होता है कि कृष्ण पूर्ण पवित्र थे, वे काम-विकार से पैदा नहीं हुए थे। आज तो 'श्री' शब्द को रस्मी तोर पर मिस्टर शब्द के स्थान पर प्रयोग कर दिया जाता है परंतु वास्तव में 'श्री' शब्द केवल देवताओं के नाम के आगे प्रयोग हो सकता है क्योंकि उनका जीवन पवित्र होता है। श्रीकृष्ण की 'वैकुण्ठनाथ' की उपाधि से सिद्ध है कि उनका जन्म पूर्ण पवित्र था। आप सोचिये, जबकि श्रीकृष्ण की अनन्य भक्ति करने वाले नर-नारी भी काम-विकार को छोड़कर ब्रह्मचर्य व्रत धारण करते हैं तो स्वयं श्रीकृष्ण का जन्म इस विकार से कैसे हुआ होगा? मीरा का उदाहरण सामने है। उसने श्रीकृष्ण की भक्ति के कारण आजीवन ब्रह्मचर्य का पालन किया और इसके लिए विष का प्याला भी पीना सहर्ष स्वीकार कर लिया। अत: जबकि श्रीकृष्ण की भक्ति के लिए, उनका क्षणिक साक्षात्कार मात्र करने के लिए और उनसे कुछ मिनट रास रचाने के लिए भी काम-विकार का पूर्ण बहिष्कार ज़रूरी है तो आप सोचिये कि श्रीकृष्ण के माता-पिता, मित्र-संबंधी इत्यादि काम-वासना वाले लोग कैसे हो सकते हैं? श्रीकृष्ण के साक्षात् स्वरूप को तो काम वासना वाले लोग छू भी नहीं सकते, उन्हें निहार भी नहीं सकते। आज जबकि श्रीकृष्ण के मंदिर में जाकर लोग उनकी जड़ मूर्तियों के सम्मुख भी काम विकार का संकल्प करना महान पाप समझते हैं तो श्रीकृष्ण की चैतन्य रूप की उपस्थिति में इस भारत रूपी वृहद् मंदिर में काम और कामी कैसे उपस्थित हो सकते हैं? अत: सिद्ध है कि उनका जीवन पूर्णत: पवित्र था। इस कारण यह वाक्य प्रचलित है कि 'जहाँ श्याम हैं, वहाँ काम नहीं और जहाँ काम है, वहाँ श्याम नहीं।' ❖

सम्पादकीय ..✍

यन्त्रवत् और मानववत्

आज के युग में मशीनें मानववत् (मानव जैसी) होती जा रही हैं और मानव यंत्रवत् (मशीन जैसा)। यंत्रवत् होने का क्या अर्थ है? हम बिजली का बटन दबाते हैं और पंखा चल पड़ता है। वह सोचता नहीं है, चलूँ या न चलूँ। हरेक यंत्र ऐसे ही, दूसरे द्वारा चलाये गये बटन के साथ बँधा है। इसी प्रकार मानव भी जब दूसरों के द्वारा दबाए गए बटन के आधार पर क्रियायें करने लगे तो यंत्रवत् हो जाता है मानो उसकी अपनी सोच-समझ है ही नहीं। ग्लानि रूपी बटन दबाया किसी और ने और क्रोधित वह हो गया। महिमा का बटन दबाया किसी और ने और वह प्रसन्न हो गया। दोनों अवस्थाओं में दूसरे द्वारा दबाए गए बटन का दास है व्यक्ति, इसे कहते हैं यंत्रवत्।

बटन अपने हाथ में रखिए

एक बात आई, उदास कर गई। दूसरी आई, चिंतित कर गई। तीसरी आई, ईर्ष्यालु बना गई। चौथी आई, बदला लेने पर उतारू कर गई। इस प्रकार सारा दिन आने वाली भिन्न-भिन्न प्रकार की बातों, परिस्थितियों, घटनाओं रूपी बटन हमसे कुछ भी करवा लेते हैं। जैसे किसी मशीन का एक बटन दबाओ तो चीज़ को पीस देती है, दूसरा दबाओ तो छान देती है, तीसरा दबाओ तो बोरे में भर देती है, इसी प्रकार, हम भी मशीनवत् भिन्न-भिन्न मन:स्थितियों से गुज़रते रहते हैं, एकरस नहीं रहते। एकरस रहने के लिए बटन दूसरे को नहीं, स्वयं के हाथ में रखना होता है। **मानववत् अर्थात् अपना बटन किसी और को न देकर अपने हाथ में रखने वाला। अपने जीवन को बाह्य प्रभावों के बदले आंतरिक समझ से चलाने वाला। ऐसा व्यक्ति हर परिस्थिति में एकरस रह सकता है। आंतरिक स्थिति जब लंबे समय तक अपने हाथ में रहती है तो मज़बूत बन जाती है और लंबे समय तक दूसरों से प्रभावित होती रहती है तो उसे हर छोटी-बड़ी बात में अस्थिर होने की मानो आदत पड़ जाती है।**

मानव का मालिक, मानव स्वयं है

स्थिर मन:स्थिति का एक उदाहरण संत तुकाराम हैं। उनका जीवन गरीबी में गुज़रा। एक दिन किसी सेवा के बदले उन्हें गन्ने मिले। रास्ते में बच्चों ने मांगे तो बाँट दिये, केवल एक गन्ना बचा। पत्नी केवल एक गन्ने को देख गुस्सा हो गई और चिल्लाने लगी कि तुम सब कुछ बाँट देते हो। पत्नी ने गुस्से में ही वह एक गन्ना उनकी पीठ पर दे मारा। गन्ने के दो टुकड़े हो गए। तुकाराम मुसकराए और बोले, अच्छा हुआ, एक टुकड़ा तुम खाना, एक मैं खा लूँगा। इस सारी घटना में संत जी का अपने पर पूरा नियंत्रण है। बच्चों द्वारा माँगना, पत्नी का गुस्सा करना – ये बाहरी घटनायें हैं। संसार में हम रहेंगे तो घटनायें तो घटेंगी, परंतु मैं कौन हूँ, किस उद्देश्य को लेकर संसार में आया हूँ, मुझे क्या करना है, जिसे यह स्मृति में रहता है वह इन घटनाओं के चलाने से नहीं चलता वरन् अपने निर्धारित लक्ष्य की दिशा में चलता है। यंत्र का अपना कोई लक्ष्य नहीं होता, वह जड़ है, मानव की सेवा के लिए है। यंत्र का मालिक मानव है परंतु मानव का मालिक स्वयं मानव अर्थात् वह स्वयं है। यदि यंत्र पर से मानव का नियंत्रण हट जाये तो नुकसान हो जाता है और मानव पर से स्वयं मानव का नियंत्रण हट जाये तो उससे भी भयंकर नुकसान हो जाता है। फिर दूसरे मनुष्य कानून का सहारा लेकर उस अनियंत्रित मानव को नियंत्रित करने का प्रयास करते हैं परंतु वह प्रयास ज़बर्दस्ती का होता है, उससे वो उपलब्धि नहीं हो पाती जो स्व-नियंत्रण से होती है। अत: मानववत् जीवन व्यतीत कीजिए, अपने आपके मालिक बनकर रहिए।

मेन स्विच बंद कीजिए

जब अन्दर की वृत्तियों की बागडोर हमारे अपने हाथ में होती है तो बाह्य इंद्रियों में अपने आप अनुशासन आ जाता है। कई लोग कहते हैं, आँखों को सुन्दर चीज़ें अच्छी लगती हैं तो सुन्दरता को देखने में हर्जा क्या है? सिर्फ देख ही तो रहे हैं। परंतु यदि अंदर से वृत्ति पर निर्णय शक्ति का अंकुश न हो तो देखने के बाद उसे छूने और लेने की ओर भी हम बढ़ते जाते हैं। अत: भीतर का ब्रेक पावरफुल रखकर देखेंगे तो अहित होने की सीमा को पार नहीं करेंगे। अंदर की वृत्ति का परिवर्तन किए बिना यदि जबर्दस्ती या डर से या प्रलोभन से या दिखावे से किसी एक इन्द्री पर अंकुश लगा भी दिया तो दूसरी इन्द्री और ज़्यादा चंचलता में उलझा लेगी। मान लीजिए, लोकलाजवश, हम मनचाही चीज़ को ज्यादा देर घूर नहीं सकते तो कहीं सुनने में उलझ जायेंगे। इसमें भी रोक लग गई तो कुछ खाने में उलझ जायेंगे। इसलिए आवश्यकता है मेन स्विच को बंद करने की अर्थात् मन की वृत्ति को ज्ञान द्वारा संयमित करने की। मन है रानी मक्खी की तरह, उसे उड़ाकर यदि ईश्वर के सान्निध्य में बैठा दिया तो सभी मक्खियाँ अर्थात् इंद्रियाँ स्वत: अंतर्मुखी हो जायेंगी।

शरीर धर्मसाधनम् है

हमारे मनीषियों ने कहा, 'शरीरम् आद्यम् खलु धर्म साधनम्' अर्थात् शरीर धर्म की साधना के लिए है परंतु आज यह अर्थ साधनम् और इंद्रिय साधनम् बनकर रह गया है। इससे हम अर्थ कमाते हैं और इसी की इंद्रियों की तुष्टि करते हैं। कहते हैं कि एक बार एक सेठ के पुत्र ने सुन्दर मूल्यवान घोड़ा खरीदा। वह उसकी सुन्दरता पर इतना अधिक मुग्ध था कि उस पर सवारी भी नहीं करता था। हाँ, इतना करता था कि प्रात: उसे सजा-धजा कर घास लेने जंगल में जाता, सारा दिन घास काटता और उसे घोड़े पर लादकर घर लाता। घोड़ा उसे रात-भर खाता। सुबह होते ही सेठ-पुत्र उसे लेकर पुन: जंगल में चला जाता। इस प्रकार यह क्रम चलता रहा। एक दिन घोड़ा मर गया तो वह सिर पीट-पीटकर रोने लगा कि मैंने तो इसे घास खिला-खिलाकर मोटा किया, कभी सवारी भी नहीं की, एक पैसा इससे कमाया नहीं, मेरा तो सारा पुरुषार्थ व्यर्थ चला गया पर अब क्या हो सकता था, मृत घोड़ा जीवित तो हो नहीं सकता था।

ज्ञान, मौत से पहले अमूल्य

जब सेठ-पुत्र रोने लगा तो एक समझदार व्यक्ति आगे आया, बोला, भाई, घोड़े की सुन्दरता पर तुमको मुग्ध नहीं होना चाहिए था, तुझे उस पर सवारी करनी चाहिए थी। तू जितना समय उसको सजाने में लगाता था, इतना समय तुझे अपने आपके, घर के, पिता के कार्यों में हाथ बँटाना चाहिए था। घोड़े के लिए घास काटने में तो 5-6 घण्टे बहुत होते हैं, बाकी समय में तुझे घोड़े से सेवा करानी चाहिए थी। घोड़े से ढोया हुआ सारा घास उसे ही चरा देने के बदले कुछ बचाना भी चाहिए था। सेठ-पुत्र सुनता रहा, पर अब पश्चाताप के सिवाय हो भी क्या सकता था? जो समझ घोड़े के मरने के पहले अमूल्य हो सकती थी, घोड़े के मरने के बाद अब वह किसी काम की नहीं रही थी।

देखा जाए तो यह शरीर भी आत्मा के लिए घोड़ा ही है। इस पर सवार हो व्यक्ति भी प्रतिदिन दफ्तर, स्कूल, खेत या अन्य कार्यस्थल पर जाता है और शाम को जो मिलता है, उसे इसी घोड़े पर लादकर घर ले आता है और फिर उन लाए हुए भोगों को इसी शरीर रूपी घोड़े के खान-पान, सुख-सुविधा, इंद्रिय रस पर खर्च कर देता है। इस प्रकार जीवन-भर उसका यही क्रम चलता रहता है। यह तो ऐसे ही हुआ कि घोड़ा घास के लिए और घास घोड़े के लिए। दूसरे शब्दों में, शरीर भोगों को जुटाने के लिए और जुटाए हुए भोग

शरीर द्वारा भोगने के लिए, पर बिचारी आत्मा को क्या मिला? समय आने पर इस शरीर रूपी घोड़े की मृत्यु होगी तो आत्मा के हाथ तो खाली होंगे। भोग कमाने वाला भी गया और भोगने वाला भी गया पर आत्मा ने क्या किया संसार में? उसके खाते में क्या आया? घोड़ा तो मर गया पर आत्मा को तो आगे के सफर के लिए कुछ अर्जन चाहिए। क्या चौबीस घंटे घोड़े के लिए भोग अर्जित करने में गुजारने अनिवार्य हैं? इसलिए कुछ घड़ियों के लिए इससे अलग होकर, अपने स्वरूप में टिककर अपने प्यारे पिता परमात्मा को याद करना, उनकी श्रीमत प्रमाण विश्व सेवा करना भी अनिवार्य है ताकि जीते-जी यह घोड़ा हमें अपना गुलाम ना बना सके और इसके छूट जाने के बाद हमें पश्चाताप ना हो कि हमने इससे कुछ कमाया नहीं। आत्मा इसके जाने से पहले ही इसे छोड़ दे, इससे इतनी उपराम हो जाए कि इसमें रहना और इससे निकलना समान लगने लगे, यह है पश्चाताप रहित अवस्था। ना जीते जी कोई पश्चाताप हो और ना मरने के बाद।

जाने से पहले समझ लें

जैसे घोड़े के मरने पर लोग सेठ-पुत्र को समझाने आए और उनकी समझानी सेठ-पुत्र को किसी काम नहीं आई, इससे शिक्षा लेकर इस शरीर रूपी घोड़े के जाने के बाद नहीं, वरन् जाने से पहले ही मानव आत्मा को भी समझ लेना चाहिए कि वह इस नश्वर और दिन-प्रतिदिन मृत्यु की ओर बढ़ने वाले शरीर को देखकर क्यों इतरा रही है? क्यों बार-बार दर्पण में निहारकर, अपना कीमती समय इस पर कुर्बान कर रही है? इसमें से निकलते पसीने की बदबू को इत्र की ओट में छिपाने की नाकाम कोशिश क्यों कर रही है? जानवरों की आह निकलवाकर बनाए गए सौन्दर्य प्रसाधनों से क्यों इसके उभरते गड्ढों को पाटने में लगी है? लोगों का ध्यान इस आवरण पर अटकाकर उन्हें परमात्मा से, कर्त्तव्यों से, सद्गुणों से विमुख करने का विकर्म क्यों कर रही है?

नकली उत्पाद

यह आवरण अल्पकाल का साथी है, उस अवधि की कोई गारंटी भी नहीं है। दुनिया की कंपनियाँ अपने उत्पादन की गारंटी देती हैं। पंखें, मशीन, टेपरिकॉर्डर की कुछ तो गारंटी अवधि होती है पर इस पंच भौतिक आवरण की तो पल भर की भी गारंटी नहीं। जिस चीज़ की गारंटी ना हो वो नकली कहलाती है। इसीलिए इस नकली उत्पाद को 'झूठी काया' कहा गया, क्या पता यह कब आत्मा का साथ छोड़ दे।

स्वयं से बातें कीजिए

अन्त समय पश्चाताप से बचने के लिए देह, देह के संबंधों और देह के पदार्थों से उपराम हो आत्मा को स्वयं के साथ इस प्रकार बातें करनी चाहिएँ – **'हे आत्मन्, तुम अविनाशी ज्योति हो, अमर हो, तुझमें 84 जन्मों का पार्ट भरा है। यह चोला आखिरी है, इसके बाद सतयुगी सुन्दर कंचन काया मिलने वाली है। कवि ने कहा है, 'यह पुर-पुट्ठन यह गलि बहुरि न देखी जाए' भावार्थ है, यही घर, यही गली, यही मोहल्ला, यही गाँव इस आत्मा को पुनः देखने को नहीं मिलने वाला है। अविनाशी नाटक के अनुसार, हर पाँच हजार साल के कल्प में केवल एक बार यह दृश्य आता है, वह भी सीमित अवधि के लिए। अब वह अवधि पूरी हो दृश्य बदलने वाला है। आने वाला दृश्य सतयुग की सुनहरी गलियों का होगा। इस पुराने से ममत्व हटाकर, समस्त तेरे-मेरे से मन हटाकर उगते हुए स्वर्णिम युग के सूरज को निहार!'**

जब आत्मा स्वयं से इस प्रकार बातें करती है तो इस शरीर रूपी घोड़े पर सवार होते भी इससे डिटैच रहती है। घोड़े का प्रयोग करते भी अपनी सच्ची कमाई कर लेती है। आप भी इस विधि को सीखिए, समस्त कर्म बंधनों से मुक्त हो सदा मुसकराने का भाग्य मिल जायेगा।

– ब्र.कु. आत्म प्रकाश

'पत्र' संपादक के नाम

मई 2010 अंक में 'दो शब्द अभिभावकों से' लेख पढ़कर काफी शिक्षायें मिली। बच्चों को अगर माता-पिता समय निकाल कर सुसंस्कारित बनाने के लिए पूरा प्रयत्न करें तो यह निश्चत है कि बच्चे भी बुढ़ापे का बहुत अच्छा सहारा बन सकते हैं। ऐसे लेखों के लिए मैं आपका बहुत-बहुत आभारी हूँ, मेरी ढेर सारी शुभकामनायें!

– ब्र.कु.सतीश, हरदोई

'ज्ञानामृत' में लेख लिखने वालों का जितना धन्यवाद करूँ, उतना ही कम है। शायद मेरे पास शब्द नहीं हैं। इतने अच्छे-अच्छे अनुभव आते हैं, पढ़कर ऐसा लगता है कि पढ़ते ही रहें और जीवन में पूरा ही उतारकर संपूर्ण फरिश्ता बनकर बाबा के पास चले जायें। मैं उनकी खास शुक्रगुजार हूँ जो हर महीने इसमें लेख लिखते हैं, खास रमेश भाई जी, संपादक जी और संयुक्त संपादिका बहन जी की लेखनी कमाल की है। कितनी गुह्य, रहस्यमय और अनुभवयुक्त! दिल से सबका पद्म-पद्म धन्यवाद!

– ब्र.कु.रेणु, बहादुरगढ़

'नये मेहमान को क्या दे सकेंगे आप?' लेख पढ़ा तो गीत याद आया 'कैसे जी सकेंगे भीड़ भरे संसार में..' भीड़ बढ़ाकर क्या हम आने वाले मेहमानों का स्वागत कर रहे हैं? जब वातावरण ही दूषित होगा तो कैसे समाज का निर्माण होगा? बाबा बुला रहा है 'चलो आत्माओ अब घर है जाना..तुमको बुलाये पिता वो सुहाना..।' लेखक ने समय की मांग अनुसार चिन्तन करके लेख में जान डाल दी है। हम राजौरी वालों की ओर से भ्राता जी को कोटिश: धन्यवाद, शुभकामनायें!

– ब्र.कु.अशोक व ब्र.कु.अनिल, राजौरी (जम्मू-कश्मीर)

मई 2010 अंक में छपा लेख 'परिस्थिति : वरदान या अभिशाप' निजी जीवन में बहुत ज्यादा उपयोगी साबित हुआ। लेखक का इससे पहले वाला एक लेख 'जीभ प्रबंधन' भी मैंने पढ़ा व उसे अपने जीवन में उतारा भी। आपकी मदद से सभी का मार्गदर्शन हो, ऐसी शुभकामना है।

– सौरभ, रूड़की (हरिद्वार)

जून 2010 के अंक में ब्र.कु. रमेश भाई का लेख 'पुरुषोत्तम संगमयुग और ड्रामा का ज्ञान' पढ़कर आत्मा और ड्रामा का ज्ञान पक्का हुआ। लेख में बताया गया कि ड्रामा के ज्ञान से, कल्प पहले की स्मृति को कल की स्मृति समझकर किसी भी बात का श्रेष्ठ निर्णय ले सकते हैं। साकार ब्रह्मा बाप और मम्मा के साथ के अनुभव पढ़कर उमंग-उत्साह बढ़ा। लेख अनेक राज़ों की गुत्थी सुलझाने वाला है। मम्मा के प्रति दादी जानकी जी का लेख अव्यक्त होते भी सर्व दैवी गुणों से संपन्न मम्मा की साकार पालना को प्रत्यक्ष करता है। ज्ञानामृत के नव प्रकाशन वर्ष की ढेर सारी बधाइयाँ! उमंग-उत्साह बढ़ाती इस आध्यात्मिक पत्रिका के लिए तहेदिल से शुक्रिया!

– ब्र.कु. आशा, चित्तौड़गढ़

ज्ञानामृत में प्रकाशित लेखों और कविताओं से नई दृष्टि, नई चेतना और नवजीवन प्राप्त होता है। जून 2010 की ज्ञानामृत में प्रकाशित सर्व सामग्री ज्ञान के अमृत से परिपूर्ण है। पर्यावरण दिवस पर विशेष लेख 'मानव और पेड़' अत्यंत ही हृदयस्पर्शी और जनजीवन को पेड़ों के प्रति नई दृष्टि और आस्था प्रदान करने वाला है। कथाशैली में विदुषी लेखिका ने पेड़ को परिवार का अभिन्न अंग, उपयोगी, सहायक और हितैषी निरूपित किया है। हमारी ओर से आपको अनंत बधाइयाँ! परम आदरणीया दादी जानकी का 'मम्मा सर्व दैवी गुणों से संपन्न थी' अत्यंत ही मर्मस्पर्शी है। अनुपम संपादक शैली के लिए भी बधाई स्वीकार करें।

– ब्र.कु. ललिता जोशी, कोदरिया (महू)

प्रश्न हमारे, उत्तर दादी जी के

दिव्यबुद्धि के वरदान से विभूषित आदरणीया दादी जानकी जी, हर प्रकार के प्रश्नों के उत्तर देकर आत्मा को संतोष से भर देती हैं। बुद्धिवानों की बुद्धि बाबा ने उन्हें ऐसी कला प्रदान की है कि वे उलझे कर्मों की गुत्थियाँ सुलझाकर समाधानस्वरूप बना देती हैं। प्रस्तुत हैं भाई-बहनों द्वारा पूछे गए प्रश्नों के दादी जानकी द्वारा दिये गये उत्तर ... – सम्पादक

प्रश्नः- बाबा कहते, अनुभूति कराओ, इसके लिए क्या कदम उठाएँ?

उत्तरः- जब तक खुद को अनुभव नहीं, दूसरों को करा नहीं सकते। इसलिए अंदर से इस बात का शौक होना चाहिए कि जो बाबा सिखाता है, मनन करके उसका मैं स्वयं अनुभव करूँ। हमको अपना बचपन याद आता है। जब आत्मा का ज्ञान पहले-पहले मिला तो बात अंदर जँच गई कि मैं भी आत्मा हूँ, अन्य भी आत्मा हैं। इससे दृष्टिकोण बदल गया। फिर दूसरों को मेरे से अनुभव होने लगा। देहभान की सोच दूसरी होती है। बिना ज्ञान के, दृष्टि में देह, दुनिया, संबंध और पदार्थ ही रहते हैं। आत्मा रूप में स्थित होने से दृष्टि बदल जाती है। जब स्वयं को अनुभव हुआ तो सोचा, औरों को कराएँ।

उन दिनों, कोई स्टूडेन्ट सेन्टर पर आया, कोर्स कराया, यह सब होता ही नहीं था। तो अकेले में दीवार के सामने बैठकर निज आत्मा का ज्ञान देती थी। कभी छत पर ऐसा करती थी। जैसे मैं अनुभव कर रही हूँ, आत्मा क्या है, मैं अच्छी तरह समझ रही हूँ, मन-बुद्धि-संस्कार सहित है, फिर ऐसे है। आत्मा देह से न्यारी होती है, कितना अच्छा लग रहा है। तो मैं साक्षी होकर कर्म करते इसका अनुभव करती थी। अपने को समझा-समझाकर के किसी दूसरे को दीवार में इमर्ज करके समझाती थी। समझाते-समझाते फीलिंग आने लगी कि दीवार को शान्ति हो रही है। गुम्बज की तरह, हममें से जो आवाज़ निकलता है, सुनाई तो पड़ता है ना! जो हमारा अपना अनुभव है, दूसरों को होगा ज़रूर। आत्माभिमानी होने से यह अनुभूति भी होती है कि पाँच तत्वों वाले शरीर में थी तो मैं भारी थी, आत्म-अभिमानी होने से हलकी हो गई हूँ। हलकी हो गई तो फिर लगता है मैं चेतन आत्मा सत् हूँ, शान्त हूँ।

जैसे आँख में ज्योति देखने के लिए है, ऐसे ही आत्म-अभिमानी स्थिति में स्थित होते ही आत्मा में रोशनी आ जाती है। यह समझ में आ गया कि इन आँखों से जो कुछ देखती हूँ, वह विनाशी है इसलिए उससे प्रीत नहीं होती है। हमारे मन में जो होता है, चेहरे पर वही आता है और वैसा ही वायुमंडल बन जाता है, दूसरे के अंदर भी वही पहुँचता है। तो एक, मैं आत्मा क्या हूँ, यह अनुभव करना और दूसरा, बाबा के द्वारा प्राप्ति का अनुभव करना। बाबा जो भी शिक्षायें दे रहा है कि बच्चे, स्वदर्शन चक्रधारी बनो, दैवी गुणों को धारण करो तो पहले ये सभी शिक्षायें मेरे जीवन में आ जायें, एक भी शिक्षा बाबा की मेरे जीवन से मिस न हो। अंदर से मेरी यह तीव्र इच्छा हो। बाबा की शिक्षायें हमारे जीवन में ऐसी हों जो देखने वाला पूछे, तुमको सिखलाने वाला कौन है और हम उन्हें बतलाएँ कि बाबा है। जीवन

ऐसा किसने बनाया? बाबा की शिक्षाओं ने। बाबा मेरे से जो चाहता है, वो मैं पूरा करूँ। जब यह इच्छा होती है तो अनुभूति भी होती है। भक्ति में भी जो पक्के भक्त होते हैं, उनकी भावना पूरी होती है। ऐसे ही संगमयुग पर हम भगवान के बच्चे हैं। हम जो भावना अपने व दूसरों के कल्याण अर्थ रखते हैं, वह पूरी होती है। जब बाबा देखता है कि मेरा बच्चा अच्छी बातें सोचता है तो मदद करता है।

यदि अपने या दूसरे के प्रति मन में नेगेटिव ख्याल है या संदेह है कि मेरा यह कार्य होगा या नहीं होगा तो दोनों ही स्थितियों में भगवान की मदद नहीं मिलेगी। माँगने से भी नहीं मिलेगी इसलिए माँगो नहीं पर अपने व दूसरों के लिए अच्छा करो। विश्वास से सोचो, होगा, क्यों नहीं होगा, अवश्य होगा, कोई प्रश्न नहीं है। कब होगा, यह प्रश्न भी नहीं है। भले कल होने वाला हो पर अंदर से मेरा विश्वास कहे कि आज ही होगा। बाबा कहते हैं, जो कल करना है वो आज कर ले और जो आज करना है वो अब कर ले, यह हमें करना है। बाबा कहता है, अब नहीं तो कब नहीं। ऐसे हमारे किए हुए अनुभव औरों को मदद करेंगे। बाबा कहते हैं, मुख से बोल कम हों, औरों को अनुभव हो। अनुभव से हम मूर्तियाँ बन जायेंगे। मूर्ति कुछ बोलेगी नहीं लेकिन चेहरा कार्य करेगा। **पहले चिंतन चलता था कि औरों को कैसे समझायें पर अब चिंतन चलता है कि अपने को कैसे समझाऊँ। बाबा हमको इशारे से समझा रहा है, मैं भी अपने को इशारे से समझाऊँ।** इशारे से समझने वाला देवता बन जाता है। समय अनुसार हमको अनुभव होना चाहिए कि हम सो देवता थे, अभी बन रहे हैं।

प्रश्नः- मधुबन में रहते ग्रुप की कैसे संभाल करें और संभाल करते भी न्यारे कैसे रहें?

उत्तरः- हमारा फर्ज कहता है कि मधुबन में अपने ग्रुप का तो ध्यान रखें लेकिन बाबा के जो भी बच्चे आते हैं, वे एक-दो से फायदा ज़रूर उठायें। एक-दो का ध्यान भी ज़रूर रखें और लाभ भी पूरा उठाएँ। ऐसा ध्यान ना रखें कि मेरा ग्रुप है, मुझे बहुत चिंता है। चिंता वाला, फ़िक्र वाला कोई काम न करें। उनको यह हो कि हमारी संभाल पर इतना ध्यान दिया जा रहा है तो हम अपना टाइम वेस्ट ना करें। अगर किसी को कोई तकलीफ हो तो तुरंत उसका निवारण करो, ऐसे नहीं कि आठ दिन बीत गए, जाने का दिन आया तब उसको सेलवेशन दें। जब हम ग्रुप संभालते थे तो सुबह-शाम पूछते थे, तुम्हें खाने की, पीने की, सोने की कोई तकलीफ तो नहीं है। बाबा भी चक्कर लगाता था कि किसी के पास रजाई, तकिया, खटिया की कमी तो नहीं है। एक बार बाबा हिस्ट्री हॉल में मुरली चला रहा था। मैं आकर बैठी। बाबा मुझे देख रहा था। मुझे लगा, बाबा मुझे दृष्टि नहीं दे रहा, देख रहा है। बाबा ने कहा, यहाँ क्यों बैठी हो? जो यहाँ आये हैं, वे क्लास में बैठे हैं? मैंने देखा, मेरे साथ आये हुए तो बैठे ही नहीं थे। तब से लेकर आज तक ध्यान रखती हूँ कि क्लास में सब हाज़िर हैं या नहीं, नहीं तो बाबा की दृष्टि याद आती है। जब हम स्वयं क्लास में रेग्यूलर रहते हैं तो दूसरों की भी ऐसी संभाल करते हैं। डिटेच रहना माना घूमना-फिरना नहीं, खुद एक्यूरेट रहना। जो मधुबन में आते हैं, वे भी एलर्ट और एक्यूरेट रहकर अच्छी तरह सीखें। इस तरह ध्यान रखना ज़रूरी है। ऐसे भी नहीं कि किसी को डाँट लगाएँ कि क्लास में आता क्यों नहीं, फिर वह भाग जायेगा। प्यार से, अटेन्शन से समझाना है ताकि वो अलबेला ना रहे। कइयों का अलबेलेपन का संस्कार बहुत पक्का है। ज्ञान-योग का इतना अच्छा प्रोग्राम चल रहा है तो बाहर घूमने चले जायेंगे। हमारा काम है, कहो कम पर हम खुद ख्याल रखें कि हमें खुद मिस नहीं करना है। ❖

पुरुषोत्तम संगमयुग और दैवी संविधान

• ब्रह्माकुमार रमेश शाह, गामदेवी (मुंबई)

जिस प्रकार ईश्वरीय ज्ञान के चार विषय हैं – ज्ञान, योग, धारणा और सेवा, उसी प्रकार कारोबार के भी चार विषय हैं – धर्म, राज्य, भाषा और परिवार।

धर्म के द्वारा हरेक मनुष्य को अपनी आध्यात्मिक उन्नति तथा जीवन-व्यवहार के संबंध में मार्गदर्शन मिलता है। राज्य सत्ता का कारोबार कानून एवं नियमों के ज्ञान के आधार पर चलता है। राज्य और धर्म, जीवन रूपी नदी के दो किनारे हैं जिनके बीच में शांतिपूर्वक बहने से नदी लोकमाता बनकर सबके सुख का कारण बन जाती है।

सतयुग-त्रेतायुग में परिवार भी छोटा था, जनसंख्या भी कम थी और कारोबार करने वाली निमित्त आत्मायें भी सतोप्रधान थीं और इसी कारण उनके द्वारा लिये गये निर्णय भी सतोप्रधान थे। परिणामस्वरूप वे निर्णय सबको सुख देने वाले और अच्छा मार्गदर्शन देने वाले थे।

द्वापरयुग से राज्य-कारोबार करने वाले रजोप्रधान बने और परिणामस्वरूप, अनेक समस्यायें शुरू हो गईं। कलियुग में तो ये समस्यायें बहुत बढ़ गईं क्योंकि कारोबार करने वाले तमोप्रधान बन गये थे। जनसेवा के बदले स्वयंसेवा ही उनका लक्ष्य बन गया। इस प्रकार स्वार्थबुद्धि के आधार पर लिए गए निर्णय अनेकों के लिए दुख और अशान्ति का कारण बन गये।

सतयुग-त्रेतायुग में तो सभी प्रेम, सद्भाव और सहयोग की भाषा बोलते थे परंतु द्वापरयुग से भाषा भी बदल गई और ईर्ष्या-द्वेष, वैर और युद्ध, जीवन-व्यवहार बन गया। एक-दूसरे के राज्य के ऊपर आक्रमण कर अपने राज्य का विस्तार करना, अन्य का धन बलपूर्वक हड़पना यह व्यवसाय बन गया जैसे, मोहम्मद गज़नवी ने कई बार भारत में आकर सोमनाथ जैसे अनेक मंदिरों को ध्वस्त किया और अपार धन लूटकर ले गया। शुरू में तो ये लोग लूटकर चले जाते थे परंतु बाद में इन्होंने यहाँ ही अपना अड्डा बना लिया, जिस कारण मुगल साम्राज्य और बाद में अंग्रेज़ों का साम्राज्य शुरू हुआ।

जनसंख्या विस्फोट होने लगा तो नये-नये देशों में जाकर लोग रहने लगे। अमेरिका, ऑस्ट्रेलिया, न्यूज़ीलैंड जैसे देश अस्तित्व में आये परिणामरूप राज्य-कारोबार चलाने के लिए संविधान की ज़रूरत पड़ने लगी। सब देशों ने अपने-अपने संविधान बनाये। वर्तमान समय इंग्लैंड के अलावा सभी देशों का अपना-अपना संविधान (Constitution) बना हुआ है। संविधान के आधार पर होने वाले कारोबार की जाँच के लिए न्यायालयों आदि को भी सत्तायें मिलने लगीं।

भारत आज़ाद हुआ तो पहले-पहले संविधान की रचना करने के लिए एक कमेटी बनाई गई। भारत 15 अगस्त, 1947 को आज़ाद हुआ और 26 जनवरी, 1950 के दिन उसे अपना संविधान मिला जिसके आधार पर भारत को गणतंत्र घोषित किया गया। इस संविधान में सरकार के अधिकार और दायित्व, भारत के नागरिकों के अधिकार और दायित्व आदि बातों की घोषणा की गई। केन्द्र सरकार और राज्य सरकारों के आपसी संबंध को भी स्पष्ट किया गया। भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने United Motors Vs Union Govt. जैसे अनेक फैसलों द्वारा केन्द्र सरकार के अधिकारों और दायित्वों के बारे में घोषणा की। भारत के संविधान में संसद द्वारा, समय प्रति समय ज़रूरत

मुताबिक संशोधन भी किया गया। अब तक संविधान में सौ से भी अधिक बार परिवर्तन हुआ है।

प्रजापिता ब्रह्मा कुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय के कारोबार में भी समय के साथ-साथ परिवर्तन होता रहा। स्थापना से लेकर ब्रह्मा बाबा के अव्यक्त होने तक ईश्वरीय कारोबार ब्रह्मा बाबा के माध्यम से मिली हुई शिवबाबा की श्रीमत के आधार पर चलता रहा। ब्रह्मा बाबा द्वारा प्राप्त श्रीमत को ही यज्ञ का आधार मानकर पहले 32 वर्षों तक कारोबार चलता रहा। अव्यक्त होने से दो दिन पहले ब्रह्मा बाबा ने मुझे आबू में म्यूज़ियम के लिए नक्की लेक के निकट भवन खरीदने के लिए अहमदाबाद भेजा और मैंने उसका सौदा भी कर लिया। मैं मधुबन आने के लिए अहमदाबाद से निकला और 19 जनवरी सुबह मधुबन पहुँचा तो मालूम चला कि ब्रह्मा बाबा अव्यक्त हो गए तब मेरे मन में यही प्रश्न था कि म्यूज़ियम के लिए जो मकान लेना है, उसे खरीद करें या नहीं। इसलिए 21 जनवरी को जब अव्यक्त बापदादा की पधरामणि हुई और मुरली के पश्चात् मैं टोली लेने के लिए अव्यक्त बाबा के सामने गया तो मैंने इस संबंध में पूछा। अव्यक्त बापदादा ने कहा कि खरीद तो करना ही है क्योंकि बाप ने ब्रह्मा द्वारा आपको छुट्टी दी थी परंतु अभी यज्ञ कारोबार में परिवर्तन करना होगा, आपस में मीटिंग करनी होगी, राय करनी होगी, संविधान बनाना होगा और संविधान के आधार पर यज्ञ कारोबार करना होगा। इस प्रकार से यज्ञ के इतिहास में पहली बार संविधान बनाने के बारे में विचारधारायें चलीं। साकार बाबा के समय भी संविधान बनाने के बारे में बातें चली थीं, लिखत भी लिखी गई थी परंतु उसको कानूनी स्वरूप और बापदादा की स्वीकृति नहीं मिली थी इसलिए वह संविधान ब्रह्मा बाबा के समय कार्यान्वित नहीं हो सका था।

परंतु 21 जनवरी, 1969 के दिन अव्यक्त बापदादा ने जो श्रीमत दी, उसके आधार पर संविधान बनाने के लिए दिल्ली के कमलानगर सेवाकेन्द्र पर करीब सात दिनों तक गुलज़ार दादी की अध्यक्षता में हमारी मीटिंग चली जिसमें जगदीश भाई, दादा आनन्द किशोर, दादा चन्द्रहास आदि-आदि यज्ञ के महारथी भाई-बहन शामिल थे। संविधान के गठन के दौरान अनेक प्रकार के विचार चले और सभी विचारों को प्रतिदिन गुलजार दादी द्वारा अव्यक्त बापदादा से भी पूछा जाता था और बापदादा से जो मार्गदर्शन मिलता, उन्हीं बातों को लिखित रूप देने का प्रयत्न होता रहा। सात दिन की उस मीटिंग के परिणामरूप दैवी संविधान का गठन हुआ। बाद में हम सब आबू आये तथा दादी प्रकाशमणि जी तथा अन्य सभी जो दिल्ली में उपस्थित नहीं थे, उनकी भी राय लेकर अंत में इस संविधान के प्रारूप को अव्यक्त बापदादा के सम्मुख रखा गया। हम सबने पूछा कि यह संविधान कब से लागू होना चाहिए, तब अव्यक्त बापदादा ने जवाब दिया कि 21 जनवरी, 1969 से ही यह संविधान कार्यान्वित हो गया, ऐसा लिखना चाहिए। इस प्रकार से ब्रह्मा बाबा के पार्थिव शरीर के अग्नि संस्कार के दिन से ही दैवी संविधान लागू हो गया, ऐसा लिखा गया। इसी संविधान के आधार पर यज्ञ का कारोबार चलता है। इसमें यज्ञ का कारोबार कैसे किया जायेगा, कौन कर सकता है, उसके क्या अधिकार हैं, ज़ोन क्या हैं, सेन्टर क्या हैं आदि-आदि सभी बातों के बारे में मार्गदर्शन दिया गया है।

यज्ञ कारोबार चलाने के लिए मैनेजमेंट कमेटी का भी गठन किया गया और दादी प्रकाशमणि जी को मुख्य प्रशासिका तथा दीदी

मनमोहिनी को सह मुख्य प्रशासिका बनाया गया।

संविधान में लिखा गया है कि इस ईश्वरीय विश्व विद्यालय की मुख्य प्रशासिका हमेशा ही बहन रहेगी। वर्तमान दुनिया की संस्कृति पुरुष प्रधान है, ऐसे वातावरण में बहनों को संचालन का पूर्ण अधिकार देना, यह बहुत बड़ा क्रांतिकारी कदम ईश्वरीय कारोबार में है। भारत की संसद में 33 प्रतिशत प्रतिनिधित्व बहनों-माताओं को मिलना चाहिए, इस प्रकार का परिवर्तन संविधान में करने का पुरुषार्थ भारत की सरकार कर रही है परंतु पुरुष प्रधान संस्कृति के कारण अभी तक यह परिवर्तन नहीं हो सका है। राज्य सभा में तो विधेयक पास हो गया परंतु लोकसभा में पास होने में कठिनाइयाँ आ रही हैं। दुनिया के ऐसे कई देश हैं जिनमें बहनों-माताओं को चुनाव में वोट देने का अधिकार भी नहीं मिलता है और दैवी संविधान के अंतर्गत बहनों-माताओं द्वारा ही कारोबार चल रहा है।

दूसरी एक विचित्र बात दिव्यदृष्टि दाता शिवबाबा ने संविधान में लिखवाई कि मुख्य प्रशासिका की अनुपस्थिति में सह मुख्य प्रशासिका स्वत: ही मुख्य प्रशासिका का पद ग्रहण कर लेगी। इसकी ज़रूरत दादी प्रकाशमणि जी के अव्यक्त होने पर पड़ी। उस समय कइयों के मन में यह प्रश्न था कि अब मुख्य प्रशासिका कौन बनेगी। मीडिया ने तो इस बात को बड़ा कर दिया। पच्चीस अगस्त, 2007 को दादी जी अव्यक्त हुए और 26 अगस्त को एक टीवी चैनल ने झूठा समाचार प्रसारित किया कि ब्रह्माकुमारीज़ में, 'मुख्य प्रशासिका कौन बने' इस पर आपस में मतभेद है। हमारे पास आबू में यह समाचार आया तो मैंने फौरन ईश्वरीय संविधान को उद्धृत करते हुए उन्हें बताया कि हमारे यहाँ यह समस्या है ही नहीं क्योंकि हमारे संविधान में स्पष्ट लिखा है कि मुख्य प्रशासिका के देह-त्याग पर सह मुख्य प्रशासिका स्वत: ही मुख्य प्रशासिका के पद को ग्रहण कर लेगी। लेकिन अब तक हमने यह घोषणा नहीं की है क्योंकि दादी प्रकाशमणि जी के पार्थिव शरीर का अग्नि संस्कार नहीं हुआ है। इस विश्व विद्यालय के देश-विदेश में अनेक बहन-भाई हैं, वे सभी अंतिम संस्कार में हाज़िर रहना चाहते हैं इसलिए जब तक अग्नि संस्कार नहीं हुआ है तब तक हम नई मुख्य प्रशासिका की घोषणा नहीं करेंगे। जैसे ही 27 अगस्त को दादी जी के पार्थिव शरीर का अंतिम संस्कार संपन्न हुआ तो 28 अगस्त को उपस्थित सभी महारथी भाई-बहनों की मीटिंग बुलाई गई। दादी जानकी तो मुख्य प्रशासिका के रूप में थी ही इसलिए कोई प्रश्न था ही नहीं लेकिन सह मुख्य प्रशासिका कौन बने, इस पर चर्चा हुई और सर्वसम्मति से दादी हृदयमोहिनी जी को सह मुख्य प्रशासिका के रूप में नियुक्त किया गया और संयुक्त मुख्य प्रशासिका के स्थान पर दादी रतनमोहिनी जी को नियुक्त किया गया। दादी निर्मलशान्ता जी तो संयुक्त मुख्य प्रशासिका पहले से थी ही। यह स्वत: संचालित उत्तराधिकार (automatic succession) की बात दुनिया के अन्य किसी भी संविधान में नहीं होती। राजतंत्र में तो राजा का कारोबार चलता है और राजा के बाद युवराज को राजा की गद्दी का वारिस बनाया जाता है। इसलिए इंग्लैण्ड में जब राजा शरीर छोड़ता है तो पहले यह घोषणा होती है – Long live the king. Old king is dead.

इस प्रकार से शिवबाबा ने इस दैवी संविधान के निर्माण द्वारा अनेक प्रकार की नई-नई बातें हम बच्चों को सिखाई हैं जिनका वर्णन अन्य लेख में किया जायेगा। ❖

भगवान – पुत्र रूप में

• ब्रह्माकुमारी ऊषा, पीतमपुरा (दिल्ली)

मेरा जन्म लौकिक दुनिया के हिसाब से धन-धान्य संपन्न और भक्ति भाव वाले परिवार में हुआ इसलिए बाल्यकाल में नाज़ों से पली। भौतिक सुख-सुविधा भी खूब मिली। शुरू से भगवान के प्रति आस्था भी बहुत थी। जब सारा परिवार सोया होता, मैं सुबह-सुबह नहा-धोकर सभी देवी-देवताओं की आरती-पूजा करती।

बेटी हुई, मातम छा गया

बीस साल की उम्र में एक अच्छे घर में शादी हुई। सब अच्छा था लेकिन एक के बाद एक तीन बेटियाँ हुईं। सबके मन में यही था कि एक बेटा वारिस आ जाये। पुत्र की कमी मुझे भगवान के बहुत समीप ले आई। चौथी बेटी होने के समय मेरी भक्ति चरम सीमा पर थी। एक लाख बार 'ओम नमः शिवाय' का मंत्र जपते हुए चावल, तिल का एक-एक दाना गिनकर चढ़ाना, ज्योत बत्ती करना, बेलपत्र चढ़ाना, 150 बार शिवचालीसा पढ़ना, शिवपुराण पढ़ना, चालीस दिन बिना नमक के व्रत करना, नवरात्रि व्रत करना, देवी माँ का सोलह शृंगार करना, डेढ़ साल तक अखण्ड ज्योत एक घी और एक तेल की, मन्दिर में भी और घर में भी जलाना – यह सब करती रही। भगवान का हिस्सा हर चीज़ में निकालना, भोग लगाना, तीन समय मंदिर जाना, अथाह दान-पुण्य करना, सभी देवी-देवताओं को सर्दी में शाल चढ़ाना, कपड़े पहनाना – क्या नहीं किया! यह सब करते, मुझे आवाज़ आती, माँ मैं तेरा दुख दूर करने आ गया। मैं कहती, तू मुझे दिखाई क्यों नहीं देता? मैं सोचती थी, शायद बेटा हो जायेगा तो सभी दुख दूर हो जायेंगे लेकिन चौथी भी बेटी हो गई। घर में मातम छा गया। सभी रोते हुए आते, मैं उन्हें तसल्ली देती कि तुम्हारे घर में दुर्गा देवी आई है। मेरे अंदर असीम शक्ति आ गई थी जो मैं सबको समझा रही थी। सबका व्यवहार मेरे प्रति बदल गया।

सभी मुझे बेचारी समझने लगे

मुझे अपने भाग्य पर बड़ा भरोसा था कि मेरा अकल्याण नहीं हो सकता। भगवान से कहती, आप तो मेरा साथ नहीं छोड़ सकते, सब छोड़कर अलग हो गये। सास-ससुर पूना चले गये। मैं चार बेटियों के साथ अपने भगवान शिव से बातें करती। मेरा मंदिर जाना भी बंद हो गया। सभी मुझे बेचारी की नज़र से देखने लगे, मेरा घर से बाहर निकलना

मुश्किल हो गया। घर के पीछे एक बूढ़ी माता रहती थी जो हमारे घर से ही निकलकर ब्रह्माकुमारी पाठशाला में जाती थी। मैं उससे पहले भी पूछती थी, माताजी, वहाँ क्या होता है? कहती थीं, बेटी, अभी तेरी उम्र बहुत छोटी है। बाद में उन्होंने ही मुझे मुरली लाकर देना शुरू किया जिसे पढ़कर बहुत सुख-चैन पाती। एक दिन माताजी ने कहा, बेटी, तू साप्ताहिक कोर्स कर ले। छोटी बच्ची को भगवान के पास छोड़कर, घर का ताला बंदकर मैंने कोर्स करना शुरू कर दिया। वापस आती तो बच्ची खेलती मिलती।

माँ, मैं तेरे दुख दूर करने आ गया

एक दिन पाठशाला में मुझे बताया गया कि आज बाबा (भगवान) को मधुबन में आना है, शाम को ज़रूर उसे याद करना। मैं नई-नई ज्ञान में आई थी। शाम के समय याद में बैठी

तो यही कहा, बाबा, मुझे तो याद करना भी नहीं आता, आप धरती पर आये हो, मुझे भी राह दिखाओ। **तभी छोटे-से ब्रह्मा बाबा ने बालक के रूप में मेरे सिर पर हाथ रखकर कहा, माँ, मैं तेरे दुख दूर करने आ गया। मैं घंटों रोती रही। भगवान को मेरे दुख दूर करने धरा पर बेटा बनकर आना पड़ा, एक अविरल धारा आँखों से बहती रही।** उस दिन से मैं भगवान को वारिस, कुलदीपक, बेटा, घर का चिराग मानकर चलने लगी। नित नये अनुभव होने लगे। भोग के समय जब भोग लगाया तो कहता है, माँ, इसमें नमक नहीं है, मैं तो खा लूँगा, तेरे और बच्चे नहीं खायेंगे। मैंने चखा, नमक नहीं था, फिर नमक डालकर भोग लगाया। ऐसा बेटा जो जीते-जी भी साथ है, मरकर भी साथ चलेगा। जिसका कोई मात-पिता नहीं, जो अजन्मा है, उसकी मैं पद्मापद्म भाग्यशाली माँ। थक जाती हूँ तो आकर पैर दबाता है, सिर की मालिश करता है। लोरी देकर अपनी गोद में अनेकों बार सुलाता है।

भगवान मेरा बेटा है

मेरी सबसे छोटी बेटी शांतमूर्त है। उसने अपना पहला जन्मदिन सेन्टर पर ही मनाया। आज 13 साल की है। उसके हर जन्मदिन पर शक्तिनगर और पीतमपुरा दोनों सेन्टरों पर भोग लगता है। हर साल मधुबन आती है। पूरे साल की अपनी खर्ची इकट्ठी कर यज्ञ में स्वाहा करती है। ओ.आर.सी. में प्राइज जीत कर लाती है। चारों बच्चियों ने शिवबाबा को अपना भाई बनाया हुआ है। राखी शिव बालक (भाई) को ही बाँधती हैं। हर साल शिवरात्रि पर बड़ी धूमधाम से उसका (शिव बाबा का) बर्थडे मनाती हैं जिसमें सभी बड़ी दीदियाँ – चक्रधारी दीदी, सुधा दीदी, रानी दीदी, प्रभा दीदी आती हैं। बाबा को 56 प्रकार के भोग लगते हैं तथा ब्राह्मणों का ब्रह्मा भोजन होता है। सब बड़े अच्छे अनुभव करके झोलियाँ भरकर जाते हैं। सभी कहते हैं, आज तो ऊषा के बेटे का जन्मदिन है। सभी सगे-संबंधियों को यह नाज़ है कि इसका बेटा भगवान है। शिवरात्रि के एक हफ्ते पहले ही सबकी मुबारकें मिलनी शुरू हो जाती हैं।

बाबा ने मुझे खिलाया

एक बार की बात है, मैंने शिवबालक को सुबह दूध और फल का भोग लगाया। शाम को भी फल का भोग लगाने बैठी तो मेरा बेटा (शिव बालक) कहता है, माँ, तू भूखी सोयेगी, मुझे तो खाना खाना है। मेरी आँखें भर आई क्योंकि घर में कोई था नहीं, सभी फंक्शन में गये हुए थे। उसे मालूम था कि माँ ने बनाया नहीं तो खायेगी क्या। मैंने बेसन का चीला बनाया। बाबा को खिलाया। बाबा ने फिर अपने हाथों से मुझे खिलाया।

दादी का पत्र मिला

मेरा पार्ट बांधेली गोपिका के रूप में चला। ज्ञान में आने के बाद मैं मधुबन में बाबा को हर महीने या महीने में दो बार पत्र लिखती रहती थी। पहले तो मैं कभी घर से निकली नहीं थी। ज्ञान में आने के बाद से पोस्ट ऑफिस जाती, ईशू दादी के नाम से कणे-दाने के साथ पत्र भी भेजती, उसकी स्लिप गीता पाठशाला में रिटर्न आती। ऐसा कम से कम चार साल तक किया जिसके रिटर्न में दादी के हाथों से लिखा हुआ पत्र व टोली मेरे पास आई जिसे मैं पागलों की तरह हज़ारों बार चूमती, निहारती रही। दादी जी के वो अनमोल महावाक्य मेरे जीवन में वरदान बन गये। दादी ने लिखा, **लगन में मगन रहने वाली सच्ची गोपिका, शुभभावना वा श्रेष्ठ संकल्पों की अग्नि में बंधनों को जलाकर बाबा के सम्मुख आ जाओ।**

मधुबन की मिट्टी को चूम लिया

देखते ही देखते मेरे सारे बंधन कट गये। चार बेटियों को नानी के घर छोड़ बाबा से सम्मुख मिलन मनाने पहुँची। मुझे बाबा कहते, माँ, तेरा बेटा इंतजार कर रहा है, देखता है, मेरी माँ मुझसे मिलने आयेगी या

नहीं। मेरी नींद, भूख सब खत्म हो गई। एक ही धुन थी, मेरा बेटा मेरा इंतजार कर रहा है। जब मधुबन जाने के लिए शक्तिनगर सेन्टर पहुँची तो विदाई के समय सब फूलों की वर्षा कर रहे थे। दस दीदियाँ खड़ी थी, कोई खाना दे रही थी, कोई बिस्तर, मुझे कुछ भी सुध नहीं थी। बाबा, मुझे जाना है, बस एक यही धुन थी। जब मैंने मधुबन की धरनी पर कदम रखा तो उसकी मिट्टी को चूम लिया। यहाँ पर बेटा भगवान आया है। मेरे बेटे की आँखों में भी आँसू, मेरी भी आँखों में आँसू। हम घंटों एक-दूसरे को निहारते रहते, मन कहता, ये पल कभी खत्म न हों। मधुबन में दादी जी ने टीचर वाला बैज मुझे पहनाया। बाबा का पार्ट तब स्टेज से नीचे उतरकर सबको दृष्टि देने का था। मेरा बेटा स्वयं चलकर अपनी माँ को निहारता रहा, शक्तियाँ भरता गया। अविस्मरणीय वो मंगल मिलन था कल्प के बिछड़े हुए माँ-बेटे का।

योग से आँखें ठीक हो गई

मेरी आँखों में कोई इन्फेक्शन हो गया था जिसका कोर्निया पर इफेक्ट आ गया। सभी डॉक्टरों ने जवाब दे दिया कि अब आपकी आँखें ठीक नहीं हो सकती। एम्स में दिखाया। बाबा के पास बैठी तो आवाज़ आई, बच्ची, कहाँ धक्के खा रही है, सुप्रीम सर्जन तेरे पास है। मैंने 11 दिन अमृतवेले चार बजे, आँखों के लिए योग रखा। जादूगर की ऐसी जादूगरी हुई जो चौथे दिन आँखें ठीक हो गई।

मैं भक्तिमार्ग में एक बेटे को तरसती थी। बाबा ने पाँच बेटे दे दिये। मधुबन, ओ.आर.सी., शक्तिनगर, पीतमपुरा, पीतमपुरा की गीता पाठशाला। कोई भी प्रोग्राम होता है तो पांचों पाण्डवों की तरह खड़े हो जाते हैं। पूरे विश्व की माँ, जगतमाता बना दिया उसने मुझे।

तुम तो शिव की माँ हो

मुझे वो दिन नहीं भूलते, जब मैं सेन्टर जाने के लिए घर से बाहर निकलती तो ससुर कहते, तुम्हारी उम्र है क्या सेन्टर जाने की, बच्चियों की शादी करो, फिर जाना, अगर फिर से गई तो टाँग काट दूँगा। कितनी ही बार पीछे के दरवाज़े से सेन्टर जाती, भगवान रक्षक बन ले भी जाता और वापस भी ले आता। फिर भी उन्हें कैसे न कैसे पता लग ही जाता। एक दिन बाबा ने शिवशक्ति बना बड़े प्यार से यह कहलवा दिया कि आपने मेरी मौत का गारंटी कार्ड ले रखा है क्या? उसके बाद वे थोड़ा शांत रहने लगे। उन्हें हार्ट अटैक हुआ। मैंने बोला, आप ठीक हो जायें तो बाबा के घर भोग लगवायें। वो आश्रम गये, उन्हें इतना अच्छा लगा, कहने लगे, हर महीने मेरी तरफ से भोग लगवाना। आज वो नहीं रहे। उनको एक साल हुआ शरीर छोड़े, अभी भी हर महीने उनकी तरफ से बाबा को भोग लगता है। जब उन्होंने शरीर छोड़ा तो सेन्टर से दीदी आई और बॉडी पर चादर और फूलमाला चढ़ाई, मेरे दिल से यही निकला, इस पोते ने तेरा उद्धार कर दिया। जब उन्होंने शरीर छोड़ा तो 40 जनों का तीन समय खाना बनता था। मैंने बाबा से कहा, यह कैसे होगा? **बाबा ने कहा, माँ, जब ब्रह्मा माँ 400 बच्चों के लिए नहीं घबराई, तुम तो शिव की माँ हो। मैं देखती रहती, पता नहीं, कैसे भोजन बन जाता। सब हैरान रह जाते कि इतना एक्यूरेट स्वादिष्ट भोजन कौन बना रहा है। यह है करनकरावनहार बाबा की कमाल।**

ऐसा वारिस, कुलदीपक पाकर मैं धन्य-धन्य हो गई। मेरा बेटा मेरे कानों में आकर कहता है –

रिश्ता तेरा मेरा जग से निराला
तू मेरी मैया मैं तेरा लाला।

सोचो, जिसे भगवान माँ कहता हो, वो माँ कितनी पद्मापद्म भाग्यशाली है! मेरे दिल की यही दुआ है, ऐसा वारिस सबको मिले, जो जीते-जी भी साथ है और मरकर भी साथ लेकर जायेगा। मेरा दिल तो हर पल यही गाता है –

मेरा चन्दा है तू, मेरा सूरज है तू,
मेरी आँखों का तारा है तू,
जीती हूँ बस तुझे देखकर, इस प्यार
भरे दिल का सहारा है तू।।

शिक्षक दिवस पर विशेष..

राजयोग द्वारा वृत्ति परिवर्तन

• ब्रह्माकुमारी उर्मिला, शान्तिवन

किसी ने ठीक ही कहा है, स्वभाव ही मनुष्य का सबसे बड़ा मित्र है और स्वभाव ही सबसे बड़ा शत्रु भी। स्वभाव ही व्यवहार का जनक है। अपनी पाँचों इन्द्रियों द्वारा हम जो भी प्रकट करते हैं, वह व्यवहार कहलाता है। व्यवहार को बदलने के लिए इंद्रियों के संचालनकर्त्ता का ज्ञान और उस पर नियंत्रण का ज्ञान चाहिए।

वर्तमान शिक्षा पद्धति में अनेक विषय पढ़ाये जा रहे हैं और ये विषय उस-उस क्षेत्र में उन्नति के माध्यम भी बनते हैं। शारीरिक विकास (Physical Development) द्वारा हम शरीर की सुंदरता और स्वास्थ्य – दोनों को बढ़ाने की कला जान जाते हैं। आर्थिक विकास (Economic Development) में हम धन बढ़ाने के तरीके सीखते हैं। वैज्ञानिक उन्नति (Scientific Development) से हम अनेक प्रकार के साधनों का सुख भोग रहे हैं। बौद्धिक विकास (Intellectual Development) हमें विस्तृत समझ दे रहा है। मनोरंजन, संगीत आदि कला (Cultural Development) के क्षेत्र में भी मन का रंजन करने वाली नित नई विधाएँ सामने आ रही हैं। कानून (Law & Order Development) की सभी प्रकार की जानकारियाँ भी हमारे पास हैं परंतु सवाल यह है कि ये सब होते हुए भी मानव का व्यवहार दिनों-दिन बर्बर होता जा रहा है। इसका कारण है कि हमसे दो विषय छूट गये हैं – (1) भावनात्मक विकास (Emotional Development) और (2) आध्यात्मिक विकास (Spiritual Development)।

भावनात्मक विकास का अर्थ है उन विचारों, भावों, वृत्तियों का ऊर्ध्वीकरण (उन्नयन) जो मानव की इंद्रियों के संचालन के निमित्त हैं। आध्यात्मिक विकास का अर्थ है, इस जगत को नियंत्रित करने में समर्थ अभौतिक आत्मिक सत्ता का विकास तथा आत्मा को सशक्त बनाने वाले, आत्मा के पिता परमात्मा का ज्ञान और उनसे होने वाली प्राप्तियों का ज्ञान।

भावनात्मक विकास क्या है?

मन में उठने वाली भावनायें (Emotions) अनेक प्रकार की हैं जैसे, क्रोध की भावनायें, ईर्ष्या की भावनायें। ये भावनायें जिन्हें हम वृत्तियाँ भी कहते हैं, स्पर्धा पैदा करती हैं। इनको दबाया जाये तो अंदर संघर्ष चलता है, प्रकट किया जाये तो समाज में समस्यायें पैदा होती हैं। लेकिन इनको नियंत्रित करके कल्याण की दिशा में लगा देना – भावनात्मक विकास के अंतर्गत आता है। हम एक बच्चे को पढ़ा-लिखा कर डॉक्टर तो बना देते हैं लेकिन डॉक्टर बनने के बाद उसमें लोभ की वृत्ति (Emotion) पैदा हो गई और कई बार हम समाचार सुनते हैं कि ऑपरेशन करते समय उसने चुपके से मरीज की एक किडनी निकाल ली, ऐसा क्यों हुआ? इसलिए हुआ कि हमने उसे किडनी निकालने का ज्ञान तो दे दिया लेकिन जो लोभ की वृत्ति पैदा हुई, उसे नियंत्रित करने का ज्ञान नहीं दिया। इसी प्रकार, हमने पढ़ाई पढ़ाकर एक व्यक्ति को वकील बना दिया। वह कानून भी जानता है लेकिन भावनात्मक विकास ना होने के कारण लोभ के वश होकर वह भी सच को झूठ और झूठ को सच बनाता है क्योंकि वह अपनी वृत्ति पर कंट्रोल नहीं कर पाता। इसी प्रकार से IQ बढ़ने से बौद्धिक विकास (Intellectual Development) के आधार पर हम बड़ी-बड़ी डिग्री प्राप्त कर लेते हैं लेकिन जब औरों से अपनी तुलना करते

और अपने को औरों से ज्यादा पढ़ा-लिखा महसूस करते तो 'मैं औरों से अच्छा हूँ' इस अहंकार के भाव के कारण दूसरों को दबाना, शोषण करना, क्रोध करना आदि नकारात्मक वृत्तियाँ पैदा होती जिनको नियंत्रित करने का ज्ञान हम नहीं पढ़ा रहे हैं।

आर्थिक क्षेत्र में विकास के कारण हम बड़े-बड़े उद्योग स्थापित कर लेते हैं, वहाँ समूह में कार्य भी करते हैं परंतु असहनशीलता की वृत्ति पैदा हो जाने के कारण एक-दूसरे को सहन नहीं कर पाते, अपमान कर देते हैं या अपमानित महसूस कर लेते हैं, बदला लेने पर उतारू हो जाते हैं।

आजकल ऐसे समाचार सुनने को बहुत मिलते हैं कि दसवीं में पढ़ने वाली एक कन्या और ग्यारवीं में पढ़ने वाला कुमार, दोनों कुएँ में डूबकर मर गये। कई बार तो इससे भी कम आयु अर्थात् आठवीं या नौवीं में पढ़ने वाले कुमार-कुमारी के भी ज़हर खा लेने या डूब जाने या अन्य प्रकार से आत्महत्या करने के समाचार मिलते हैं। इसका कारण यह है कि वृत्ति चंचल तो हो गई पर उस पर अंकुश लगाने का ज्ञान नहीं रहा। जैसे गाड़ी का गति वाला बटन तो दबा दिया पर रोकना नहीं आया तो गाड़ी किसी भी खतरे में जा सकती है। वृत्ति चंचल हुई संसार का वातावरण देखकर। इस पर नियंत्रण लगाने का उद्देश्य शिक्षा का था। शिक्षालय वृत्ति नियंत्रणालय होने चाहिएँ थे परंतु आध्यात्मिक नैतिक शिक्षा के अभाव में वह उद्देश्य पूरा नहीं हो रहा है।

कई लोग कहते हैं कि पाठ्यपुस्तकों में महापुरुषों की जीवन कहानियाँ, कई पौराणिक कथाएँ तथा आदर्श बातें होती हैं। होती हैं, इसमें कोई शक नहीं। गाँधी जी की जीवनी में सत्य और अहिंसा के मूल्य भरे पड़े हैं। मदर टेरेसा की जीवनी में सेवा भावना और झांसी की रानी लक्ष्मी बाई की जीवनी में साहस के मूल्य भरे पड़े हैं। इन्हें पढ़ेंगे तो एक बार मन में बिजली कौंधेगी, सकारात्मकता की एक तरंग पैदा होगी। परंतु आसमान की बिजली और समुद्र की तरंग कभी स्थिर रहती है क्या? इसी प्रकार, जीवनी पढ़कर मन में महान बनने की जो तरंग उठी, क्या वह मन में स्थिर रह पायेगी? इस तरंग को टिकाए रखने के लिए कोई प्रक्रिया, कोई अभ्यास विद्यार्थी को अपनाना होगा।

उदाहरण के लिए, एक विद्यार्थी की वृत्ति अपने सहपाठी में बार-बार जाती है। अब ऐसी वृत्ति के नियंत्रण के लिए पहले तो उसे यह ज्ञान होना चाहिए कि दूसरे की देह का आकर्षण तो देह अभिमान के कारण है। देह तो मात्र जड़ आवरण है। चेतन आत्मा तो आवरण के भीतर विद्यमान है। आत्मा में ही विचार हैं। व्यक्ति का व्यक्तित्व तो सुन्दर विचारों से ही निर्मित होता है। अत: मुझे हाड़-माँस के पुतले पर आकर्षित होने के बजाय महान, श्रेष्ठ विचारों को ग्रहण करने, उनकी वृद्धि करने की तरफ आकर्षित होना चाहिए।

दूसरा यह ज्ञान भी चाहिए कि यदि मैंने अपनी वृत्ति का नियंत्रण नहीं किया तो कई प्रकार के ग़लत परिणाम निकल सकते हैं, जैसे –

1. मैं इस सहपाठी की देह का इतना गुलाम हो जाऊँगा कि इसको देखे बिना चैन नहीं पड़ेगा और अगर इसके मुँह फेर लेने से या अन्य प्रकार की परिस्थिति के कारण यह मुझसे दूर गया तो मुझे डिप्रेशन आने और भविष्य अंधकारमय होने की पूरी संभावना है।

2. फिर समाज के बड़े लोगों को, अभिभावकों को पता पड़ गया तो उनके सामने शर्मसार होना पड़ेगा, झूठ बोलना पड़ेगा, मन की शान्ति, खुशी नष्ट हो जायेगी।

3. अगर अनियंत्रित वृत्ति के कारण कुछ ग़लत कर्म दोनों ओर से हो गया तो जीवन-भर के लिए कलंक का टीका लग जायेगा।

तीसरा, यह ज्ञान भी होना चाहिए कि इस भटकती वृत्ति को स्थिर करने

का, परदेह-दर्शन के अल्पकाल के सुख के बजाय सदाकाल के सुख का अविनाशी ठिकाना कौन-सा है जहाँ मन को लगाकर मैं मनोबल पा सकूँ, जीवन के महान लक्ष्य को पा सकूँ और अपने चरित्र तथा कर्म को महान बनाकर नज़रें ऊँची रखकर जीवन बिता सकूँ। वह ठिकाना है परमपिता परमात्मा शिव के रूप, गुण, कर्त्तव्य, धाम, काल का सही परिचय।

मनुष्य की देह पर एकाग्र होने के बजाय यही वृत्ति अगर परम सुन्दर परमात्मा पर एकाग्र हो जाए, देह-चिन्तन के बजाय यदि परमात्मा के गुणों के चिन्तन में लग जाये तो उस विद्यार्थी के भटकते मन को दिशा मिल सकती है। परमात्मा प्रकाश के एक बिन्दु हैं, पाँच तत्वों से भी पार, जो ऊँचे से ऊँचा धाम है परमधाम, वहाँ उनका निवास है और संसार की सुन्दर से सुन्दर वस्तु का निर्माण करने वाले, गुणवानों में गुण भरने वाले, बुद्धिवानों को बुद्धि देने वाले वही हैं। विद्यालय में ही, हर पीरियड से पहले केवल एक मिनट के लिए विद्यार्थी उस सत्यम् शिवम् सुन्दरम् भगवान का ध्यान कर लें तो उस अंदर के खालीपन को मिटाने और आंतरिक सुख से भरपूर होने की एक सरल प्रक्रिया उन्हें मिल जायेगी। इस अभ्यास से, मन में उठने वाली अच्छी तरंगों को टिकाए रखने में उन्हें बड़ा सहयोग मिलेगा। ❖

दु:खों से छुड़ाया शिव बाबा ने

ब्रह्माकुमार सतीश सक्सेना, लक्ष्मी नगर, दिल्ली

सन् 1993 जनवरी में मेरी माताजी का तथा मार्च में मौसी का देहांत हो गया। इसके बाद कुछ और परिवारजन भी हमसे विदाई ले गये। अल्प अवधि में परिवार में पाँच मौतों के बाद मेरी युगल ने भी शरीर त्याग दिया। मुझे बहुत बड़ा सदमा लगा। मैं भगवान को कोसने लगा कि वे मेरे साथ ऐसा क्यों कर रहे हैं, मैं तो उन्हें इतना पूजता हूँ। रोने से मेरी आँखें खराब हो गईं जिस कारण मोतियाबिन्द तथा रेटिना के चार ऑपरेशन हुए।

एक दिन मैं लक्ष्मीनगर स्थित ब्रह्माकुमारी सेन्टर के आगे से जा रहा था, सेन्टर घर के पास ही है। मैंने बोर्ड पढ़ा और अंदर चला गया। वहाँ का शांत वातावरण देख मुझे बहुत शान्ति प्राप्त हुई तथा निमित्त बहन जी ने मेरी आपबीती सुनी। मैंने रो-रोकर सारा दुख सुनाया तो हलका हो गया। मुझे उन्होंने आत्मा-परमात्मा के संबंध में कुछ ज्ञान दिया तथा एक सप्ताह का कोर्स करने को कहा। मैं हलका तो हो ही गया था, अत: कोर्स आरंभ कर दिया। ईश्वरीय ज्ञान की समझ आने के बाद मुझे ऐसा लगा जैसेकि मुझे अपना खोया हुआ परिवार मिल गया। मेरी खोई खुशी वापस आ गई। मैंने यह ज्ञान बाँटना आरंभ कर दिया। नवंबर 1994 को हमें बहन जी शिवबाबा से मिलवाने माउंट आबू ले गई। मेरे साथ परिवार के अन्य सदस्य (ज्ञान में चलने वाले) भी थे। दिसंबर 1994 को प्रात: दिल्ली वापस घर आ गया। घर आके बैठा ही था कि मेरे 25 वर्षीय छोटे पुत्र के निधन का समाचार आ गया। वह अविवाहित था लेकिन इस बार मैं इतना दुखी नहीं था क्योंकि मुझे सृष्टि-मंच पर हर आत्मा के अपने-अपने पार्ट का ज्ञान मिल गया था। ड्रामा कह, बिन्दी लगा मैं तीसरे दिन से सेन्टर पर जाने लगा। अब सब ठीक चल रहा है। बाबा का लाखों बार शुक्रिया जो उसने मुझे दुखों से छुड़ा दिया। ❖

ईश्वरीय शक्तियों और वरदानों से भरपूर अनेक मनभावन राखियाँ ज्ञानामृत कार्यालय में प्राप्त हुई हैं। स्नेही प्रेषक बहनों को हार्दिक आभार और दिल की दुआएँ – सम्पादक

दोस्त हो तो ऐसा – खुदा दोस्त जैसा

• ब्रह्माकुमार सूर्य, आबू पर्वत

सच्चे दोस्त का नाता सबसे समीप का नाता है। जीवन में यदि कोई सच्चा दोस्त मिल जाए तो बोझ हल्का हो जाता है और यदि भगवान ही दोस्त बन जाए तो कहने ही क्या...? ऐसा ही कुछ अपने साथ भी हुआ। बचपन से ही अनेक दोस्त आये और गये। ज्ञान-मार्ग में भी कई योगी-दोस्त मिले, परन्तु जब भगवान से दोस्ती हुई तो जीवन का रंग ही बदल गया। सन् 1982 से हमने भगवान को अपना दोस्त बनाया। देखा यह कि खुदा दोस्त हमें कुछ ज्यादा ही प्यार करता है।

एक दिन मैं आबू की पहाड़ियों में घूम रहा था। आपको बता दूँ कि मैं योग अभ्यास हेतु अकेला ही पहाड़ियों पर बहुत जाता था। डर की तो बात ही नहीं थी, खुदा की दोस्ती का जो नशा था। उस दिन मन खुश नहीं था, कोई बात चिन्तन में थी। मुझे संकल्प आया कि मेरा भी कोई अच्छा दोस्त होता तो यह बात उससे शेयर कर लेता। बस मेरा यह सोचना ही था कि मन में तीव्रता से आवाज़ आने लगी, मैं हूँ ना तुम्हारा खुदा दोस्त। यहाँ से गहरी हो गई उससे दोस्ती। मन की वो बात उसे सुना दी और मन हल्का हो गया।

याद रहे, भगवान की यह दोस्ती पवित्रता, ईमानदारी, सच्चाई व दिल के प्यार पर आधारित होती है। दोस्ती अर्थात् दो सच्चे दिलों का मिलन। यदि दिल ही सच्चे न हों तो दोस्ती टिकती नहीं। नाता जोड़ लेना तो सरल है परन्तु उसे निभाना व उसका सुख पाना - यही विवेकशीलता है। भगवान से दोस्ती में हम उसके यज्ञ के लिए क्या करते हैं - उसका अतिशय महत्त्व है। यदि हम तो कुछ न करें और उससे बहुत कुछ अपेक्षाएँ करें तो हमें तृप्ति नहीं मिलेगी।

मुझे आबू के हवा-पानी के कारण बुखार आता रहता था। हवा शुष्क व पानी कठोर था। बात सन् 1969 की है, अचानक मुझे बुखार रहने लगा। मैं किसी को बताता भी नहीं था क्योंकि न यज्ञ सम्पन्न था और न कोई दवा आदि थी। हमें स्वयं को योगबल से ही ठीक करना था। इसके सात दिन बाद सन्तरी दादी बाबा के रूम में जब योग कर रही थी तो अचानक ध्यानस्थित हो गईं। ऊपर बाबा ने मुझे इमर्ज किया और सन्तरी दादी को कहा कि बच्चे को बुखार रहता है, इसे सात दिन देशी घी का हलवा खिलाओ। बस, यह हलवा बना बुखार की ऐसी दवाई कि एक बार खाने से ही बुखार

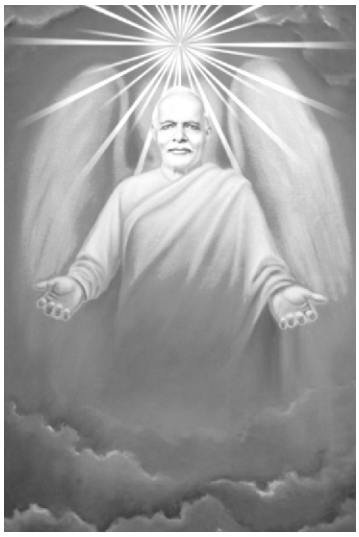

समाप्त हो गया...है ना प्यारा खुदा दोस्त...!!

यह बात सन् 1970 की है, गुरुवार की पूर्व रात्रि थी, चाँद नभ में अपनी सम्पूर्ण छटा बिखेर रहा था, रात भी मानो दिन बन गया था और मैं छत पर घूम कर शिव बाबा से बातें कर रहा था। बाबा से मिले हमें कई मास बीत गये थे जबकि बाबा प्रति सप्ताह आते ही थे। मन प्रभु-मिलन को तड़फ रहा था। हर बार कह दिया जाता था कि घर वाले नहीं मिलेंगे। मैं कह रहा था, बाबा, क्या आप हमें नहीं मिलोगे? बाबा, आप आओ, हमें मिलो, कल तो पार्टी भी नहीं है...बाबा, आपसे मिलने की बहुत इच्छा है...आप आओ...मैं सारी रात यही करता रहा।

सुबह गुरुवार को बाबा को भोग लगाया गया और बिना किसी पूर्व प्रोग्राम के बाबा आ गये। सभी अति आनन्दित, चारों ओर आवाज़ हो गई, चलो हॉल में, बाबा आ गये। उन दिनों बाबा एक-एक से मिलते थे। दीदी मनमोहिनी बाबा से सबको मिला रही थीं। हम 40-45 भाई-बहनें थे। मेरा नम्बर आया...

बाबा ने दृष्टि दी और पूछा...रात को कितनी बार बुलाया है...? नींद की है...? फिर दीदी को देखकर कहा...बाप जो सबसे बड़ी हस्ती है, वो बिना किसी हस्ती के निमन्त्रण के तो नहीं आ सकता परन्तु आपने तो आज बुलाया नहीं...फिर मुझे कहा, कितनी बार बुलाया है...?

मन आनन्द विभोर हो गया...यह था खुदा दोस्त का प्यार...उसने प्रीत की रीति निभाई। तब मैं 20 वर्ष का ही था, ज्ञान व इन नातों में ज्यादा परिपक्वता तो नहीं थी परन्तु भगवान तो भूखा है प्यार का। वो रात और वो दिन, जो मुझे मग्न कर गया था, मुझे याद रहता है।

एक दिन की बात है, बाबा का अवतरण ओमशान्ति भवन में हुआ। मैं ठीक-ठाक था। मुरली सुनकर हम सो गये क्योंकि बाबा सारी रात रहते थे। अचानक रात्रि 12.00 बजे तीव्र बुखार हो गया। यह बुखार 107 डिग्री था। दवाई ली, 2.30 बजे बुखार 105 डिग्री पर आ गया। मैंने किचन के अपने साथी चिम्मन भाई को बुलाया और कहा, बाबा के पास जाओ और मेरा समाचार बताओ। भोला चिम्मन, बिना रोक-टोक बाबा के सामने पहुँच गया, बाबा को बताया, बाबा ने दृष्टि देकर, वहाँ रखा आधा सन्तरा दिया, उसको खाते ही सवेरे तक मेरा बुखार ठीक हो गया।

घटना सन् 1982 फरवरी की है। दिल्ली में लाल किला मैदान में ऑल इन्डिया लेवल पर बड़ा कार्यक्रम हुआ। वहाँ से 500 विदेशी व 1700 दक्षिण भारत के भाई-बहनें मधुबन में आ गये। पाण्डव भवन छोटा था, 1000 लोग भी कठिनाई से ही रह पाते थे। हमने पाँच दिन किचन में बहुत सेवा की। गुरुवार आया, दो बजे उठकर हमने भोग बनाया। अब प्रातः सात बजे से मुझे बुखार चढ़ने लगा, आठ बजे तक तीव्र बुखार हो गया। मैं किचन में ही था, आठ बजे बाबा को भोग लगना प्रारम्भ हुआ। हम सब भाई वहीं बोरियों पर बैठे योग कर रहे थे। मैं रेस्ट में जा नहीं सकता था क्योंकि जिम्मेदारी थी।

मैंने अपने खुदा दोस्त को कहा...दोस्त, ए फ्रैंड इन नीड इज ए फ्रैंड इनडीड...वही सच्चा दोस्त है जो आवश्यकता में काम आये। अब मुझे आवश्यकता है तुम्हारी मदद की। मेरा यह बुखार चार दिन के लिए हर लो, क्योंकि तीन दिन में पार्टियों को जाना था। बस, तुरन्त खुदा दोस्त ने मदद भेज दी। आठ से नौ बजे के मध्य मेरा बुखार उसी गति से उतर गया, जिस गति से चढ़ा था।

परन्तु चार दिन के बाद, प्रातः उसी समय बुखार लौट आया। हमारी इन्चार्ज तब भोली दादी थी, जिस पर भोलानाथ बहुत राज़ी था। उन्होंने भी हमारे साथ बहुत काम किया था। उसी दिन उन्हें भी तेज बुखार हुआ और वे जीवन में पहली बार बीमार होकर रेस्ट में गई। फिर मैंने अपने खुदा दोस्त को कहा...प्यारे दोस्त, अब भोली दादी भी नहीं हैं, सारी ज़िम्मेदारी मेरी है, अब पुनः कुछ दिन के लिए इस बुखार को अपने पास ले जाओ और एक घण्टे में मैं पुनः ठीक हो गया। पाँच दिन के बाद उसी समय बुखार पुनः लौट आया, जब भोली दादी ठीक होकर वापिस आ गईं। अब मैंने रेस्ट किया और खुदा दोस्त से बातें करके मैं आनन्द मग्न रहा कि वाह...खूब निभाई दोस्ती...तुझ जैसे दोस्त को पाकर हम धन्य-धन्य हो गये...हमें तुम पर गर्व है।

दिल्ली में ओ.आर.सी. के लिए जमीन ले ली गई थी। उसका फाउण्डेशन स्टोन रखना था। सभी दिल्ली के ब्रह्मावत्सों का ब्रह्मा भोजन

बनाने की ज़िम्मेदारी हमारी थी। जिस दिन हमें जाना था, उससे दो दिन पूर्व मुझे बहुत तेज बुखार हो गया। अगले ही दिन मैं ज्ञान सरोवर से मधुबन गया मुरली सुनने। मुरली जब समाप्त हुई तो मैंने अपने खुदा दोस्त को कहा कि कल मुझे कार से दिल्ली जाना है, आज मुझे ठीक होना है...अब मैं हॉल से बाहर जा रहा हूँ, जो भी डॉक्टर मुझे सर्वप्रथम मिलेगा, मैं समझूँगा कि आपने उसे मेरे पास भेजा है, उससे ही मैं ठीक हो जाऊँगा।

बाहर निकलते ही मुझे मधुबन के डॉ.कैलाश भाई मिले। वे होम्योपैथी कॉलेज के वाइस प्रिंसिपल भी रहे थे। मैंने कहा, डॉक्टर साहब, खुदा दोस्त ने मुझे आपके पास भेजा है, शाम तक मुझे स्वस्थ होना है। उन्होंने मुझे दवाइयाँ दीं और यह चमत्कार था कि शाम तक मैं ऐसा हो गया मानो मुझे कुछ हुआ ही नहीं था। ऐसे मदद करता है भगवान उन्हें जिन्होंने उसे मन का मीत बनाया है।

भगवान के बच्चे बुलायें और भगवान न आयें, यह हो नहीं सकता - यह कहा स्वयं भगवान ने। कितना सम्मान देते हैं वे अपनी महानात्माओं के निमन्त्रण को। मुझे जब भी क्लास करानी होती है या भाषण करना होता है, मैं अपने खुदा दोस्त को बुला लेता हूँ। बुलाते ही वह तुरन्त आ जाता है - यही रोज़ का अनुभव है। काम पड़ने पर ही नहीं बल्कि भोजन पर, गाड़ी में बैठते, पिकनिक करते व अन्य कई जगह पर हम उसे प्यार से बुलाते हैं। जहाँ भगवान आ जाए, वहाँ न विघ्न रहते, न कठिनाई और विजय व सफलता जन्म सिद्ध अधिकार बन जाता है।

मुझे 10 वर्ष तक मधुबन में रात्रि क्लास कराने का श्रेष्ठ अवसर प्राप्त हुआ परन्तु पेट की गड़बड़ के कारण मुझे सिरदर्द रहता था । मैं जब 9.00 बजे रात्रि क्लास के लिए बैठता था तो अपने खुदा दोस्त को कहता था, अब एक घण्टे के लिए मेरा सिरदर्द ठीक कर दो और आओ, आप ही क्लास कराओ। बस, ऐसा ही होता था। मैं तो कहूँगा कि बलिहारी इन बीमारियों की जिन्होंने मुझे खुदा दोस्त की दोस्ती के अनुपम अनुभव कराये। यह सच है कि विघ्न-बाधाएँ हमारी उन्नति की सीढ़ी बन जाते हैं, यदि हम उनमें परेशान न होकर, अपने खुदा दोस्त को यूज़ करें।

यह हमारा सर्वश्रेष्ठ भाग्य है जो कल्प के इस अन्तिम जन्म में हमें भगवान का साथ मिला। परमपिता तो वह सदा ही था, परन्तु अब परम शिक्षक व परम सद्गुरु बनकर तथा खुदा दोस्त के रूप में हमारे पास आया है। यह हमारी भक्ति का फल है या पुण्य कर्मों का उपहार...जो हम भगवान के बहुत समीप आ गये। जो कुछ हमने सोचा भी नहीं था, वो देखा, वो सब कुछ पाया। अब खुदा दोस्त परछाई की तरह हमारे साथ रहता है, वह हमें बहुत प्यार करता है, वह हमारी बहुत केयर करता है...उसने हमें बहुत सुख दिया...हमारे अन्दर का सम्पूर्ण अन्धकार समाप्त कर दिया, वही सच्चा खुदा दोस्त है...हम युग-युग तक उसके आभारी रहेंगे। ❖

ग्लोबल हॉस्पिटल में महत्त्वपूर्ण चिकित्सा सर्जरी कार्यक्रमों की जानकारी

घुटने व कूल्हे के जोड़ प्रत्यारोपण सर्जरी सुविधा
(Regular Knee and Hip Replacement Surgery)
दिनांक : 27 से 30 सितंबर, 2010
सर्जरी : डॉ. नारायण खण्डेलवाल, मुम्बई से कुशल व अनुभवी सर्जन
(Trained in U.K., Australia and Germany)
पूर्व जाँच के लिये केवल घुटने व कूल्हे के ऑपरेशन के इच्छुक रोगी संपर्क करें –
डॉ. मुरलीधर शर्मा, ग्लोबल हॉस्पिटल, फोन नं. 09413240131
फोन: (02974) 238347/48/49 **फैक्स** : 238570
ई-मेल : ghrcabu@gmail.com **वेबसाइट** : www.ghrc-abu.com

भटके राही को मंज़िल मिल गई

• ब्रह्माकुमार अशोक, उल्हासनगर

मेरा जन्म उल्हासनगर में सन् 1959 में हुआ। वर्तमान समय यूनियन बैंक में कार्यरत हूँ। मेरी ज़िंदगी विकारों से भरी थी। क्रोध की आग इतनी थी कि ज़रा-सी बात पर घर में रखा हुआ खाना फेंक देता था तथा बिना बात किसी पर भी बरस पड़ता था। माँस खाना, शराब पीना, बीवी-बच्चों को मारना-पीटना यह रोज़मर्रा की ज़िंदगी थी। मुझे लगता था कि मुझसे कभी कोई ग़लती हो ही नहीं सकती लेकिन यह मेरा अहंकार था।

ज़िंदगी बनी नर्क

शराब सेवन ने मुझे कर्ज़दार बना दिया। कर्ज़ न चुका सकने के कारण रिश्तेदारी और आस-पड़ोस में इज़्ज़त जाती रही। ज़िंदगी नर्क बन गई, मन अशांत रहने लगा। कई बार विचार आता कि अपने जीवन का अंत कर दूँ लेकिन घर-परिवार का ख्याल आता। मन की शांति पाने के लिए तीर्थ स्थानों पर गया, मंदिरों में माथा टेका, उपवास किए, सत्संग किए, गंगा सागर भी गया पर मन को शांति नहीं मिली बल्कि अशांति और बढ़ गई।

मन को मिली शान्ति

मैं माता वैष्णो देवी का भक्त हूँ। आखिरकार माँ ने मुझे सुख और शांति का रास्ता दिखा ही दिया। अक्तूबर 2006 में हमारे शहर में ब्रह्माकुमारीज़ की तरफ से नौ देवियों की प्रदर्शनी रखी गई। बहनों का हँसमुख चेहरा और ज्ञान सुनाने का तरीका ऐसा था जैसे देवियाँ स्वयं ज्ञान दे रही हों। उस दिन मन को बहुत शांति मिली। मैं सारे ग़म भूल गया पर मन में शंका हो रही थी कि इस कलियुग में भगवान कैसे आ सकते हैं। फिर बहनों ने कहा, शिवबाबा के बारे में ज़्यादा जानकारी पाने के लिए सात दिनों का कोर्स करना होगा। कोर्स पूरा होने के बाद मैं शिवबाबा की मुरली सुनने लगा। धीरे-धीरे मेरी ज़िंदगी बदलने लगी।

'ज्ञानामृत' पढ़कर खुशी मिली

कइयों को किसी की खुशी बर्दाश्त नहीं होती। मेरे साथ भी ऐसा ही हुआ। मुझे लोगों ने ब्रह्माकुमारी संस्था के खिलाफ ग़लत बातें बताई कि ब्रह्माकुमारी वाले मर्दजात को कीड़ा समझते हैं, नौकरी-धंधा छुड़वाते हैं, हिप्नोटाइज़ करते हैं, पति-पत्नी को भाई-बहन बनाते हैं। ग़लत बातें सुनकर मेरी बुद्धि खराब हो गई, केंद्र पर जाना बंद कर दिया, फिर से दलदल में फँस गया। करीबन एक साल बाद अचानक एक दिन चमत्कार हुआ। कार्यालय में, मेरे बगल की टेबल पर मुझे 'ज्ञानामृत' पत्रिका मिली, पढ़कर बहुत खुशी मिली। ऐसा लगा जैसे शिवबाबा ने मुझे फिर से याद किया हो लेकिन लोगों की ग़लत बातों में आकर केंद्र छोड़कर फिर से जाने में हिचकिचाहट हो रही थी। तब इसका रास्ता भी शिवबाबा ने निकाला।

पत्थर बना हीरा

मेरे कार्यालय में सेवारत ब्रह्माकुमारी बहन ने मुझे समाचार दिया कि ब्रह्माकुमारी संस्था की तरफ से नवंबर 2008 में दिल्ली में सिंधी सम्मेलन हो रहा है। मुझे जाने का आकर्षण हुआ। इस सिलसिले में मैं ब्रह्माकुमारी केन्द्र पर गया और निमित्त बहन को दिल की बातें बताईं। इस तरह मैं फिर से बाबा के घर पहुँच गया। भटके राही को मंज़िल मिल गई। शिवबाबा की दृष्टि मुझ पर ऐसी पड़ी कि एक पत्थर हीरा बन गया। मात्र एक महीने में मेरी बुरी आदतें, शराब पीना, माँस खाना आदि सब छूट गया। जीवन बदला, दुनिया बदली, मन को अनोखा ज्ञान

मिला।

खोई इज़्ज़त वापस मिली

आज मुझे अपने ही दिल में एक नया इंसान मिला है। पहुँचा हूँ वहाँ, नहीं दूर जहाँ भगवान भी मेरी निगाहों से। **अब घरवालों के साथ-साथ मेरे अधिकारी, मेरे साथी मुझसे अच्छी तरह बातें करते हैं। मेरी खोई हुई इज़्ज़त वापस मिल गई है। रोज़ अमृतवेला उठकर योग करता हूँ। बाबा की शक्तियाँ मिलती हैं। बाबा से गुड मॉर्निंग करने से सारा दिन हँसते-हँसते बीत जाता है और रात में गुड नाइट कर बाबा की गोद पर सर रखकर सोता हूँ। शुक्रिया शिवबाबा की!** शिवबाबा हमेशा अपने बच्चों का ख्याल रखते हैं। मेरे बेटे की बाइक का एक ट्रक के साथ ज़बर्दस्त हादसा हुआ। हालात बहुत नाजुक थे, अस्पताल में मेरे बेटे के साथ मैं था और मेरे साथ शिवबाबा। सारा दिन मैं ज्ञानामृत पत्रिका पढ़ता रहता था जिससे मुझे शिवबाबा की शक्तियाँ मिलती थीं और मैं सारी चिंताओं से मुक्त हो जाता था। परमपिता शिव परमात्मा के आशीर्वाद से आज मेरा बच्चा बिल्कुल ठीक है। शुक्रिया बाबा!

व्यक्तिगत समस्याओं का निवारण

बचपन में परियों की कहानी सुनते थे कि सफेद-सफेद वस्त्रों में परियाँ आती हैं और स्वर्ग की सैर कराती हैं। वे सपने थे लेकिन आज के कलियुग में ब्रह्माकुमारियाँ सचमुच परियाँ हैं, शिव की शक्तियाँ हैं, जो स्वर्ग का दर्शन कराती हैं। हमारी निमित्त बहन इस ईश्वरीय परिवार की माँ की तरह पालना करती हैं। ब्रह्माकुमारी केंद्र पर भाई-बहनें रोते-रोते आते हैं, हँसते-हँसते जाते हैं। बहनजी ज्ञानामृत के दान के साथ-साथ हमारी व्यक्तिगत समस्याओं के निवारण का मार्ग बताती हैं। मैं बहनों की इन्हीं बातों से इतना प्रभावित हुआ कि उनके बारे में लिखने के लिए मेरे पास शब्द नहीं।

प्यार ही ज़िन्दगी है

मेरी उन सारे भाई-बहनों से विनती है जो ब्रह्माकुमारी संस्था से जुड़े हैं, मेरी तरह लोगों की बातों में आकर, अलग होकर सुखी जीवन को बर्बाद न करें और जो इस संस्था से जुड़े नहीं हैं और आना चाहते हैं, लोगों की कही-सुनी बातों में आकर विकारों में फँसकर गुमराह न हों। ब्रह्माकुमारी संस्था खुशियों का खज़ाना है। अमीर-गरीब, छोटे-बड़े का कोई भेदभाव नहीं है, सब एक समान हैं। इस संस्था की विशेषता जाने बिना किसी नतीजे पर पहुँचने से पहले, आइए, अपनी आँखों से देखें, कानों से ज्ञान सुनें। सर्वशक्तिवान, प्यार के सागर ज्योतिबिंदु स्वरूप निराकार परमपिता शिव परमात्मा ब्रह्माकुमारी बहनों को निमित्त बना खुद टीचर बनकर हमें पढ़ाने आए हैं। हमें मनुष्य से देवता बनाने आए हैं। ऐसा अवसर बार-बार नहीं आता। शिवबाबा की मुरली सुनने से सारे ग़म दूर हो जाते हैं। गुरुवार के दिन बाबा का भोग खाने से बुरे संकल्प आने समाप्त हो जाते हैं और शिवबाबा को याद करने से मुश्किल आने से पहले ही दूर हो जाती है। आइए, हम सब ब्रह्माकुमारी संस्था के साथ कंधे से कंधा मिलाकर विश्व शांति का पैगाम दें। हर मनुष्य को प्यार की भाषा सिखलाएँ क्योंकि प्यार ही ज़िंदगी है। ❖

अगर डॉक्टर किसी रोगी को कहता है कि तुम हर तीन घण्टे के बाद यह दवाई लेना तो वह अत्यावश्यक कार्य में व्यस्त क्यों न हो, तो भी रोग से निवृत्त होने की इच्छा से डॉक्टर की आज्ञा का पालन करता है। इसी प्रकार, अब जबकि हम जन्म–जन्मान्तर के मनोविकारों रूपी रोगों से छुटकारा पाना चाहते हैं तो हमें भी बार–बार, हर घण्टे–दो घण्टे में कम से कम पाँच-सात मिनट तो परमात्मा की स्मृति में स्थित होने का अभ्यास करना ही चाहिए।

महिला सशक्तिकरण : स्वशासन अथवा सर्व पर शासन

• डॉ.शशि शुक्ला, लखनऊ

इस वर्ष अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस भारतीय राजनीति के लिये विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण रहा जब 14 वर्षों के लंबे संघर्ष और प्रतीक्षा के पश्चात् संसद के उच्च सदन (राज्य सभा) में महिला आरक्षण विधेयक (संविधान का 108वां संशोधन विधेयक) प्रस्तुत किया गया। मार्च 9 को जब यह विधेयक राज्यसभा से पारित हुआ तो प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने उसे एक ऐतिहासिक दिन कहा। यद्यपि इस विधेयक को अभी लोकसभा एवं 2/3 राज्य विधानसभाओं से स्वीकृति मिलना शेष है परंतु फिर भी यह देश-विदेश में चर्चा का विषय बन चुका है।

संसदीय इतिहास में 'मील का पत्थर' कहे जाने वाले इस विधेयक में, संसद और राज्य विधानसभाओं में महिलाओं के लिए 33 प्रतिशत सीटों के आरक्षण का प्रावधान किया गया है। यह आरक्षण निर्णय-निर्धारण एवं नीति-निर्माण प्रक्रिया में महिलाओं की भागीदारी को सुनिश्चित करेगा। ऐसी आशा की जा रही है कि यह देश में चिंतन की धारा को बदलेगा, महिलाओं के परिप्रेक्ष्य को महत्त्व देगा तथा महिला समर्थक नीतियों, कानूनों और कार्यक्रमों को वरीयता प्रदान करेगा। संक्षेप में कहा जाये तो महिला सशक्तिकरण को प्रोत्साहन देगा।

प्रश्न उठता है कि क्या वास्तव में ऐसा होगा? क्या केन्द्र और राज्य की विधायिकाओं में 33 प्रतिशत सीटें प्राप्त करके महिलायें सशक्त बनेंगी अथवा उनकी स्थिति बदल जायेगी? यह विचारणीय है कि स्थिति किसकी बदलनी है तथा सशक्तिकरण किसका होना है?

सशक्तिकरण चाहिए आत्मा का

जैसा कि प्रसिद्ध नारीवादी चिंतक सिमान द बुआ का कहना है, 'कोई महिला के तौर पर जन्म नहीं लेती बल्कि उसे बनाया जाता है।' वास्तव में **महिला शब्द एक सामाजिक लेबल है जो एक स्त्री शरीर को दिया जाता है और स्त्री शरीर एक आवरण है उस चैतन्य शक्ति का जिसे हम आत्मा कहते हैं। अंततः महिला एक शरीर नहीं, आत्मा है, ठीक उसी प्रकार जैसे पुरुष एक शरीर नहीं, आत्मा है। सशक्तिकरण आत्मा का होना है, उस आत्मा का जो अपनी शक्ति के स्त्रोत से विलग हो, उसे विस्मृत कर, शक्तिहीन हो चुकी है और जो किसी मानवीय हस्तक्षेप से, चाहे वह कितना ही सकारात्मक क्यों न हो, अपनी खोई शक्ति को प्राप्त नहीं कर सकती है।** पर क्या यहाँ तक हमारे राजनीतिज्ञों और विद्वानों की दृष्टि जाती है? इस तथ्य की अनदेखी के फलस्वरूप ही महिला संबंधी संवैधानिक प्रावधान और विभिन्न अधिनियम असफल रहे हैं और महिलाओं के विरुद्ध अपराध बढ़ते ही जा रहे हैं। आत्मा के ज्ञान के बिना किसी भी प्रकार का सशक्तिकरण नहीं हो सकता। यह ज्ञान कानून बनाने वालों और जिनके लिये बनाया जा रहा है, दोनों के लिए आवश्यक है क्योंकि शक्ति आत्मा को चाहिये जो विकारों के पाश और कर्मबंधन में बँधी है। आध्यात्मिक और नैतिक सशक्तिकरण के अभाव में महिला सशक्तिकरण खोखला भी है और अधूरा भी।

सर्वोपरि है सेवा, न कि शासन

महिलाओं की राजनीति और शासन में सक्रिय भागीदारी स्वागत योग्य है। यह सत्य है कि महिलायें अपनी श्रम शक्ति, सेवा भावना, निष्ठा और सहिष्णुता से जिस प्रकार परिवारजनों में सद्गुणों का बीजारोपण कर, उन्हें पल्लवित और पुष्पित करने की क्षमता रखती हैं, उसी का विस्तार वे नीतियों और कानून निर्माण के क्षेत्र में भी कर सकती हैं। परंतु प्रजातंत्र में शासक वर्ग प्रजा पर जिस कंट्रोलिंग और

रूलिंग पावर को प्राप्त करने के लिए साम, दाम, दण्ड, भेद का प्रयोग करने से भी नहीं हिचकता है, वह वास्तव में पहले स्व से प्रारंभ होती है। स्व पर शासन के बिना सर्व पर शासन कैसा? और जिसने स्वशासन प्राप्त कर लिया, उसे सर्व पर शासन का लोभ कहाँ? उसके लिए तो सर्व की सेवा सर्वोपरि हो जाती है।

मातृशक्ति बने शिवशक्ति

महिला आरक्षण विधेयक तो केवल 33 प्रतिशत महिलाओं को संसद के गलियारे तक पहुँचायेगा। **महिलाओं की आधी आबादी वाले इस देश में यदि प्रत्येक महिला स्व का ज्ञान प्राप्त कर ले और राजयोग के माध्यम से अपनी कर्मेन्द्रियों की राजा बन जाये तो उसे मुक्ति और जीवनमुक्ति का वर्सा तथा सर्वशक्तियों की प्राप्ति का वरदान स्वत: ही प्राप्त हो जायेगा। इसके लिए उसे न तो नारे लगाते हुए सड़कों पर उतरने की आवश्यकता है और न ही आरक्षित सीटों के लिए परस्पर प्रतिस्पर्धा करने की बल्कि ऐसा पुरुषार्थ करने की कि उसका स्थान वैजयंतीमाला में आरक्षित हो जाये।** मातृ शक्ति में शिव शक्ति बनने की जो संभावना छिपी हुई है, उसे साकार रूप देना ही महिला सशक्तिकरण का यथार्थ स्वरूप है। ❖

बदलिए दुख को सुख में

• ब्रह्माकुमार रामसिंह, रेवाड़ी

अधिकतर लोग सुख का तो स्वागत करते हैं लेकिन दुख का स्वागत करने के बजाय दुख से डरकर परेशानी अनुभव करते हैं। दरअसल दुख को शुद्ध रूप में पहचानना ही सुख है। जो लोग दुख में भी सुख ढूँढ लेते हैं, वे ही परिस्थितियों से पार जाते हैं और उन्हें ही बलवान, महावीर, अंगद आदि नाम दिये जाते हैं।

हमारा अंतर्मन एक तालाब है जिसमें विचारों रूपी लहरें उठती रहती हैं। इस तालाब में कभी-कभी इतनी गर्मी आ जाती है कि उफान आने लगता है तब सुख भी दुख नज़र आता है। इस दुख में ना तो स्वयं चैन से रह पाते हैं और ना ही दूसरों को चैन में देख सकते हैं लेकिन जब इस तालाब की तरंगें शान्त बहती हैं तो दुख भी सुख में बदल जाता है।

दुख का दूसरा नाम है अज्ञान। जब मानव दुखी रहता है और उसे सुख में जाने के लिए उपाय बताये जाते हैं, जैसे कहें कि काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार का त्याग करो तो इस अज्ञानता के आवरण को हटाने में भी उसे कष्ट होता है। वह इन विकारों को छोड़ना नहीं चाहता। अगर किसी कारण से मोटे रूप से छोड़ भी दे तो भी विकारों के अंश और वंश फिर भी रख लेता है।

समझदार व्यक्ति वही है जो दुखों का भी आह्वान करते हुए स्वागत करे। एक शहर का आलम था जिसमें प्रत्येक घर में दुख था। कोई काम के बोझ का मारा था तो कोई बेकार था। कोई बहुत धन से परेशान था तो कोई धन के अभाव में गरीब था। एक दिन सारे शहर में यह खबर आग की तरह फैल गई कि शहर के बाहर एक खँडहर के पास सुख का ढेर लगा है। फिर क्या था, सभी लोग अपने दुख की गठरी बाँध वहाँ छोड़ आए और सुख की गठरी बाँधकर ले आए। लेकिन कुछ समय बाद देखने में आया कि लोग पुन: दुखी होने लगे। जाँच करने पर पता चला कि अब एक-दूसरे का सुख देखकर उन्हें दुख सताने लगा है। पहले अपने दुख से दुखी थे, अब दूसरों के सुख से दुखी हैं। कहने का भाव यही है कि सुख या खुशी बाहरी जगत में नहीं है बल्कि बाहरी जगत से मन के नेत्र मूँद कर आंतरिक जगत में विचरण करने से प्राप्त होती है। यह एक मानसिक आदत है जो स्वयं निर्मित करनी पड़ती है। जैसे व्यसन की आदत निर्मित कर लेने पर व्यसन के बिना

रहना मुश्किल हो जाता है, उसी प्रकार खुश रहने की आदत भी हमें बार-बार खुशी की ओर अग्रसर करती है। अगर मानव को खुश रहना आ जाए तो वह एक लंबा जीवन खुशी में जी सकता है। इसलिए कहावत है कि सुख का निर्माण करने की शक्ति हमारे अपने ऊपर निर्भर करती है। हम सुख का चिन्तन करें, दूसरों को सुख देने की आदत डाल लें, सुखद विचार निर्मित करें तथा दुख देने का विचार भी न आने दें। सुख दें और सुख लें। ऐसा दीर्घकालीन अभ्यास हमें सुख का अभ्यस्त बना देता है।

शास्त्रों में एक मशहूर कहावत है कि न्याय और नीति लक्ष्मी के खिलौने हैं। इन खिलौनों से वह जैसा चाहती है वैसा नचाती है। यदि लक्ष्मी का अर्थ धन मान लिया जाये तो धन को भी वही प्राप्त कर सकता है जिसमें ये सात गुण हैं – धैर्य धारण करना, क्रोध नहीं करना, इंद्रियों को वश में रखना, पवित्रता, दया, मधुर वचन और किसी से भी द्वेष नहीं रखना। धन कमाना बुरा नहीं है लेकिन धन किस तरह कमा रहे हैं, पाप से या पुण्य से कमा रहे हैं, यह अति महत्त्वपूर्ण है। धन ना सुख देता है और ना ही दुख देता है। जिस तरह से धन कमाया जाता है, परिणाम भी उसी तरह का सामने आता है। इस परिणाम को सगे-संबंधी या संतान बाँट नहीं सकते। तभी तो कहावत है, 'धन नीति से कमाएँ और रीति से खत्म करें।'

हमारा मन बहुत बड़ी भूमि के समान है। इसमें हम खुशी या तनाव दोनों उगा सकते हैं। अगर मानव इस मन रूपी भूमि में खुशी के बीज नहीं डालेगा तो मन में तनाव रूपी घास-फूस निकलेगी। इसलिए मन रूपी भूमि को परमात्म छत्रछाया के हल से जोतना है, रहम और दया के बीज बोने हैं, स्नेह का पानी देना है, परमात्म याद की खाद डालनी है तब विकारों रूपी घास-फूस मन रूपी भूमि में नहीं उगेगी और दुख की खेती नहीं होगी। उसमें खुशियों के फूल खिलेंगे।

कहावत है, हाथी लंबी उम्र वाला होता है, शेर अधिक भयानक होता है, गिद्ध दूरदर्शी होता है, मुर्गा नियमित रूप से अमृतवेले में जगाने वाला तथा गाय में आत्म-बलिदान की भावना होती है। लेकिन मनुष्य में इन सभी प्रकार की तथा अन्य भी बहुत सारी श्रेष्ठ भावनाओं की क्षमता असीम व अगाध होती है। परंतु आज का मानव अपनी सारी क्षमताओं को भूलकर केवल धन कमाने की क्षमता बढ़ाने में लगा रहता है। धन, जमीन, भवन, साज-सज्जा, पद, शक्ति, अधिकार और अन्य ऐसी क्षुद्र प्राप्तियों की पूर्ति से संतुष्टता की मृगतृष्णा बनी रहती है जो कभी पूरी ही नहीं होती और एक दिन ऐसा भी आ जाता है कि उसे यह देह त्यागनी पड़ती है। तब उस व्यक्ति के बच्चे व पत्नी विलाप करते पूछते हैं कि आप तो इस संसार से विदा ले रहे हो, हमारा क्या होगा? जबकि अब तो उस व्यक्ति के सामने अपने परिवार से भी अधिक तात्कालिक और महत्त्वपूर्ण समस्या यह है कि अब उसका क्या होगा? जो स्वयं प्रश्नों से घिरा है, वह औरों के प्रश्नों का हल क्या देगा?

यह जीवन का शाश्वत सत्य है कि अगर कोई व्यक्ति घर में अकेले और खाली बैठा है तो वह अपने आप से ही ज़रूर निराश हो जाता है। इसलिए अपने आप से खिन्न होने की बजाय दूसरों के दुख दूर करने में मदद करें। इस खालीपन में अपनी सेवायें निकटतम ब्रह्माकुमारी आश्रम पर जाकर दें, इससे दूसरों का भला तो होगा ही, साथ में अपना भी भविष्य उज्ज्वल होगा अर्थात् परमात्म दुआयें मिलेंगी। दूसरों की मदद करने से अपनी मदद स्वत: हो जाती है। इस तरह मददगार बनने वाले अपने दुखों को भी सुख में परिवर्तन कर सकते हैं। आप अपने जीवन में जो चाहते हैं, वह प्राप्त कर सकते हैं बशर्ते कि आप दूसरों को वह प्राप्त कराने में मदद करें जो वे चाहते हैं। ❖

संगठन की मज़बूती

• ब्रह्माकुमार सुरेश, भिलाई

'जब तुम बच्चों का संगठित रूप से एक संकल्प हो जायेगा तो विश्व परिवर्तन हो जायेगा' – इस ईश्वरीय महावाक्य से संगठन के महत्त्व का पता चलता है। संगठन में रहकर हम दूसरों के गुण देखते हैं और अपनी कमियाँ निकाल सकते हैं। ईश्वरीय यज्ञ के आदि में मम्मा-बाबा ने सर्व बच्चों को संगठित रूप से एकमत होकर एक लक्ष्य पर चलना सिखाया। संगठन में रहकर सर्व को संगठित रखना व शक्तिशाली बनाना – यह बहुत बड़ी उपलब्धि है। एक निर्मल, नि:स्वार्थ संगठन के द्वारा ही परमात्म प्रत्यक्षता का कार्य सहज पूर्ण हो सकता है। तेरी-मेरी करने वाले सदा अपने को खाली व अकेले महसूस करेंगे। वे दूसरों को प्राप्तियों का अनुभव नहीं करा सकते व परमात्म आशीर्वाद से भी वंचित रह जाते हैं।

क्यों होता है संगठन कमज़ोर?

1. रूहानियत की कमी – जब हम सेवाओं के माध्यम से आपसी संबंधों में आते हैं तो देहभान-वश एक-दो की विशेषताओं को न देख कमियों को देखने लग पड़ते हैं जिससे ईर्ष्या, द्वेष, घृणा, चिड़चिड़ेपन का जन्म होता है व संबंधों में कड़वाहट आती है। आपसी प्रेम की कमी से वातावरण बोझिल होता है तथा संगठन कमज़ोर होने लगता है। सेवाओं में मान-शान की इच्छा भी देहभान का ही रूप है। बाबा को छोड़ स्वयं को प्रत्यक्ष करने की भावना संगठन में बहुत बड़ा विघ्न है।

2. एक लक्ष्य को भूलने से – हम सभी ब्राह्मण आत्माओं का लक्ष्य है संपन्न व संपूर्ण बन अपने चेहरे व चलन से परमात्म प्रत्यक्षता के कार्य को संपन्न कर घर वापिस जाना तथा फिर नई सतयुगी दुनिया में हीरो पार्टधारी के रूप में कदम रखना। इस परमात्म आश को पूर्ण करने के लिए हमें अन्य छोटी-मोटी बातों में स्वयं को नहीं उलझाना है, स्वमान में रह छोटे-बड़े सभी को सम्मान व रिगार्ड देना है। त्याग से ही भाग्य बनता है, देना ही लेना है – इन ऊँची धारणाओं की विस्मृति से ही संगठन कमज़ोर होता है व टकराव की परिस्थितियाँ विनिर्मित होती हैं।

3. संगठन के महत्त्व को न समझने से – कई आत्मायें समझती हैं कि हम तो अकेले ही पुरुषार्थ कर लेंगे, हमें किसी की ज़रूरत नहीं लेकिन यह सोचना भूल है। संगठन में ही उन्नति है, संगठन में ही सुरक्षा है। बाबा के महावाक्य हैं कि संगठन रूपी किले को मजबूत बनाओ। उसकी एक-एक ईंट का महत्त्व है। एक भी ईंट निकलने से दीवार कमज़ोर पड़ जाती है। जैसे किसी माला से एक भी मनका निकल जाए तो धागा दिखने लगता है, मनकों के बीच खाली स्थान आ जाता है। माला सुन्दर नहीं लगती है। इसी प्रकार, किसी एक आत्मा के अकेलेपन से ईश्वरीय परिवार की माला की सुन्दरता कम हो जाती है। संगठन में शान्ति तभी रहती है जब वह परिवार की भाँति बँधा रहता है। संगठन के सहयोग से पुरुषार्थ सहज होता है, तीव्रगति से उन्नति होती है। ईश्वरीय जीवन का आनन्द संगठन में रहकर ही संभव है। अगर भगवान के बच्चे बनकर भी हम एक-दो से घृणा करते रहें तो कौन मानेगा कि हमें भगवान मिला है। भगवानुवाच – 'जिसका बाबा से प्यार है, उसका ईश्वरीय परिवार से भी प्यार अवश्य होगा।' इस महावाक्य की गहनता को न समझने से भी संगठन में कमज़ोरी आती है।

संगठन को शक्तिशाली बनाने के उपाय

1. सर्व के प्रति रहम भाव रखें – शिवभगवानुवाच – **'जहाँ रहमभाव है, वहाँ आत्मिक दृष्टि सहज है तथा आत्मिक दृष्टि भूलने से ही विघ्न आते हैं।'** यह महावाक्य संगठन को शक्तिशाली बनाने का मुख्य आधार है। अत: बीसों नाखूनों का ज़ोर लगाकर भी हम रहमभाव व क्षमाभाव द्वारा आत्मिक दृष्टि बनाये रखें। ब्रह्मा बाबा ने यज्ञ-स्थापना के आदि में रात-रात जागकर, लिख-लिखकर आत्मिक दृष्टि की गहन साधना की जिसके कारण वे नि:स्वार्थ भाव से

अनेकों को आगे बढ़ाने व संगठित रख सकने में सफल हो सके। आत्मिक दृष्टि व आत्मिक भाव रखने से सभी आत्माओं को अच्छे वायब्रेशन्स पहुँचते हैं जो उन आत्माओं को आगे बढ़ाने में मदद करते हैं।

2. सहनशक्ति व समाने की शक्ति बढ़ायें:– भगवान की आज्ञा है कि हमें निंदा-स्तुति, सुख-दुख, हानि-लाभ सबमें समान रहना है। यदि हम उनकी आज्ञा का पालन खुशी से कर सब कुछ समा लेते व सहन कर लेते हैं तो उनकी दुआओं व मदद से आगे बढ़ते जाते हैं। **सहन करते-करते शक्ति इतनी बढ़ जाती है कि हमारे वायब्रेशन्स द्वारा ही दूसरों को सहन करने की प्रेरणा व बल प्राप्त होता है। सहन करने वाले शक्तिशाली तथा समाने वाले सर्व के विश्वसनीय बनेंगे।**

3. कम बोलें, कम सोचें:– संगठन में, संपर्क में आते कम, सम्मानयुक्त तथा दूसरों को आगे बढ़ाने वाले बोल ही बोलें। अधिक से अधिक शान्ति में रहने का अभ्यास करें। इससे हम स्वयं भी योगयुक्त रह सकेंगे व दूसरों को भी हमसे प्रेरणा मिलेगी तथा संगठन मज़बूत होगा। आपस में हलके बोल न बोलें। बाबा-मम्मा के समय में यह बहुत सुन्दर नियम था कि जब भी दो ब्रह्मावत्स सेवा अर्थ वार्तालाप करते थे तो प्रारंभ व अंत में मुरली की एक प्वाइंट ज़रूर सुनाते थे जिससे बुद्धि में परमात्मा की याद बनी रहती थी। आज भी कई आत्मायें ऐसा करती हैं। इस कारण संबंधों में रूहानियत बनी रहती है।

4. आपसी विश्वास व प्रेम बढ़ायें:– आपसी एकता को बढ़ाने के लिए योग भट्ठी, स्नेह-मिलन तथा स्व-उन्नति के कार्यक्रमों के साथ-साथ मधुबन, बाबा-मम्मा व दादियों के प्रति सबकी भावनायें बिठाएँ। सभी को उनकी योग्यता अनुसार सेवायें बाँटें। उनमें कुशलता आए, इसके प्रति सतर्क रहें। बड़ा कार्य सबकी राय से ही करें। किसी की विशेषता को सबके सामने व ग़लती को अकेले में बड़े प्यार से सुनाकर सुधारें। स्व उन्नति के साथ ही सेवा सफल हो सकती है, यह ध्यान सदा रहे। चूँकि यह भगवान द्वारा रचा गया यज्ञ है इसलिए इसके हितों की रक्षा के लिए हम सब 'यज्ञ रक्षक' का स्वमान पक्का कर एक हो जाएँ।

5. संवादहीनता से बचें:– किन्हीं दो लोगों में आपस में मनमुटाव या ग़लतफहमी हो गई हो तो आपस में मिलकर, बाबा तथा उनकी श्रीमत को बीच में रखते हुए, सारे संगठन के कल्याण को सामने रख तुरंत सुलझा लें व पिछली बातें भूल जायें। कौन-सी आत्मा किस भावना से कोई बात कह रही है, उसे समझने का प्रयास करें। जिस बात में सर्व की उन्नति समाई हो, उसे सहज भाव से स्वीकार कर लें। संगठन को एक रखने का दृढ़ संकल्प करेंगे तो परमात्म प्यार व आशीर्वाद से निर्विघ्न आगे बढ़ते जायेंगे।

6. योग व मुरली पर विशेष अटेंशन दें:- अमृतवेले का शक्तिशाली योग सर्व समस्याओं का समाधान है। बाबा का इशारा है कि संगठन को भी योग में सकाश दो ताकि संगठन मज़बूत हो सके। योगबल के साथ-साथ ज्ञानबल भी शक्तिशाली बनाने का साधन है जिसके लिए मुरली सुनना अति आवश्यक है। **मुरली क्लास में समयपूर्व पहुँचकर, योगयुक्त होकर इस भावना से सुनें कि भगवान की यह वाणी सिर्फ मेरे प्रति है और यह मुझे बाप समान शक्तिशाली व गुण संपन्न बनायेगी। मुरली सुनाने वाले का जितना पुरुषार्थ ज्यादा होगा, उतना ही सुनने वालों को भी अच्छे वायब्रेशन्स प्राप्त होंगे।** मुरली से संगठन की एकता से संबंधित बाबा के प्वाइंट्स को भी विशेष बल देकर सुनाना चाहिए। इस प्रकार ब्राह्मण परिवार को सकारात्मक बातों में व्यस्त रखेंगे तो संगठन मजबूत होता रहेगा।

तो आइये, हम सब यज्ञ रक्षक बन परमात्म यज्ञ रूपी किले की एक-एक ईंट को मज़बूत बनायें। चूँकि हम पूर्वज आत्मायें हैं, मास्टर बीज हैं, कल्पवृक्ष की जड़ें हैं तो हमें बाप समान स्वयं को गुप्त रख औरों को आगे बढ़ाते जाना है व परमात्म प्रत्यक्षता के कार्य में श्रेष्ठ सहयोग देते जाना है। समय की अति समीपता व महत्त्व को महसूस कर तीव्र पुरुषार्थ कर स्वयं को तथा सर्व ईश्वरीय परिवार को उमंग-उत्साह में उड़ाते मंज़िल पर पहुँचाना है। ❖

कर्मों की गुह्य गति

• ब्रह्माकुमार भगवान, शान्तिवन

जन्म-जन्मान्तर किये हुए कर्मों का फल वर्तमान जन्म में अच्छे या बुरे फल के रूप में भोगना पड़ता है। कर्मगति का ज्ञान न होने के कारण समस्या, विघ्न वा परिस्थिति के समय हम हलचल में आते हैं जिसके कारण संकल्प, विकल्प चलाकर दुखी, अशांत या तनावग्रस्त बनते हैं। एक-दूसरे के प्रति भावनायें खराब हो जाती हैं। ईर्ष्या, घृणा, नफरत, वैर-विरोध निर्मित हो जाते हैं। ऐसे समय पर साधन, सुविधायें वा जीवन में सब कुछ होने के बावजूद भी मन अशान्त हो जाता है। उस समय लगता है कि यह मेरे साथ अन्याय हो रहा है परंतु यह अन्याय नहीं, अनेक जन्मों के किये हुए कर्मों का परिणाम है।

किसी माता को उसका पति तंग करता है, किसी को उसकी सास तंग करती है, किसी को संबंधी तंग करते हैं, किसी का अपना बच्चा ही कुसंग में आकर पैसा बर्बाद करता है। कोई बीमारी के कारण परेशान है, कोई को बिना कारण से दूसरे तंग करते हैं। इन सभी समस्याओं का कारण है उसके ही अनेक जन्मों के, उस व्यक्ति के साथ के हिसाब-किताब। ऐसी समस्या के समय बुद्धि में कर्म-गति का ज्ञान होने से ही आत्मचिन्तन, परमात्म चिन्तन वा श्रेष्ठ मनन-चिन्तन कर सकते हैं। इसलिए मन एकाग्र करने के लिए कर्म गति को समझना जरूरी है।

आगरा में एक गरीब पति-पत्नी झोंपड़ी में रहते थे। एक बार उनके पास उनको जानने वाला एक व्यापारी, होटल में जगह न मिलने की वजह से रात काटने के लक्ष्य से आ ठहरा। व्यापारी ने गरीब पति-पत्नी के साथ भोजन किया, बातचीत भी की। रात्रि सोने से पहले कपड़े बदलने के लिए उसने अपना बैग खोला। गरीब की पत्नी की नज़र उस पर पड़ी। वह ललचा गई क्योंकि बैग में पाँच सौ, सौ व पचास के नोटों के बहुत सारे बंडल थे। उसे नींद नहीं आई, आँखों के सामने रुपये नाचते रहे। व्यापारी बैग सिर के नीचे रखकर गहरी नींद में सो गया। वह महिला झोंपड़ी के बाहर गई। एक बड़ा पत्थर उठाकर लाई और सोये हुए व्यापारी के सिर पर मारा। वह तुरंत मर गया। उसने बैग उठाया, पति को दिखाया और कहा कि अब अपनी गरीबी खत्म हो गई परंतु पति तो घबरा गया। उसने कहा, अगर यह बात पुलिस को पता चलेगी तो हमें जेल की सज़ा मिलेगी। फिर पत्नी के कहने से, आपस में मिलकर उस मुर्दे को जमुना नदी में धकेल दिया। घर की लिपाई-पुताई कर दी। इस घटना को उन्होंने लोगों से या पुलिस से छिपाया परंतु कर्मों से तो छिपा नहीं सके।

उन्होंने उन रुपयों से बंगला बनवाया। रुपये बहुत थे इसलिए एक गाड़ी खरीदी, दुकान खोली और गहने बनवाये। गरीबी खत्म हो गई। कुछ सालों के बाद उनको एक बच्चा हुआ। बड़े लाड़-प्यार से उसको बड़ा किया। कलेक्टर बनने जैसा पढ़ाया। नौकरी लगने ही वाली थी कि वह बीमार हो गया। बड़े अस्पताल में उसका इलाज कराया, खर्चा बहुत आया। पहले गहने बेचे, फिर गाड़ी, दुकान और बंगला भी बेचा पर बच्चा ठीक नहीं हुआ। एक दिन बच्चे ने अपने माँ-बाप को कहा, अब तो आपके सारे रुपये भी खत्म हो गए हैं, अब मैं जा रहा हूँ, ऐसा कहकर वह बच्चा मर गया। वह बच्चा कौन था? वास्तव में वह बच्चा दूसरा और कोई नहीं था बल्कि जिस मेहमान व्यापारी को मारा था, वही अपने रुपये लेने के लिए बच्चे के रूप में आया था। यह है कर्मों की गुह्य गति। अगर उस व्यक्ति के मन में आता है कि हे भगवान, आपने मेरे जीवन में कितनी समस्यायें दी हैं, मेरा सब कुछ गया, मैं बर्बाद हो

गया। तो क्या समस्यायें भगवान ने दी? नहीं, उस व्यक्ति ने अपने ही कर्मों द्वारा समस्यायें पैदा की। इसलिए कहते हैं, जो बोओगे वही काटोगे।

ठीक इसी प्रकार हमारे जीवन में भी समस्यायें कहाँ से आईं? वे हमारे ही किसी न किसी जन्म के कर्मों का हिसाब-किताब हैं। अब हमें उन्हें चुक्तू करना पड़ रहा है। तो फिर उस समस्या से परेशान, दुखी वा तंग होने से या किसी को बताने से क्या फायदा? अगर किसी माताजी का पति तंग करता है तो ज़रूर उसने भी किसी जन्म में उसे पति बनकर तंग किया होगा जो उसे अब भोगना पड़ रहा है। किसी माता को उसकी सास परेशान करती है तो ज़रूर उसने भी किसी जन्म में उसे सास बनकर परेशान किया होगा। इस प्रकार कर्मगति को बुद्धि में रखेंगे तो विपरीत परिस्थिति में भी सहनशील, एकाग्र, शान्त और तनावमुक्त रह सकेंगे।

इस संसार में हमारे द्वारा जाने-अनजाने हुए विकर्मों के हिसाब को चुक्तू करने के तीन तरीके हैं –

1. परमात्मा की याद: परमात्मा को याद करने से भी पूर्व जन्मों के हिसाब चुक्तू हो जाते हैं।

2. सहनशीलता: जीवन में आने वाले विघ्न या समस्या को अपने ही पूर्व जन्मों का हिसाब समझकर सहन करने से भी विकर्म चुक्तू हो जाते हैं।

3. भोगना: अगर परमात्मा को याद नहीं करेंगे या सहनशील नहीं बनेंगे तो भविष्य में आने वाली विनाशकालीन स्थिति से भी हिसाब चुक्तू होंगे परंतु उससे प्राप्तियाँ नहीं होंगी। यह सदा याद रहे कि जब तक अपने हिसाब-किताब को चुक्तू नहीं करेंगे तब तक वापिस अपने धाम कोई भी जा नहीं सकता।

इसलिए शिव बाबा कहते हैं, **बच्चे, मुझे याद करो, सहन करो। विनाशकालीन परिस्थितियों में अनेक दुखी, अशांत आत्माओं को धैर्य देने की सेवा करनी है परंतु यह सेवा वही कर सकेगा जिसने अपने स्वयं के हिसाब चुक्तू किये हैं। रोने वाला, दूसरों की आँखों के आँसू कैसे पोंछ सकता है, धैर्य कैसे दे सकता है? इसलिए कर्मगति के ज्ञान को बुद्धि में रख सदा हलके रहो। कर्मगति के ज्ञान वाला ही नकारात्मक या व्यर्थ संकल्पों पर फुलस्टॉप लगाकर हर एक के प्रति शुभचिन्तक बन सकारात्मक व्यवहार कर सकता है और अंतर्मुखी, एकाग्र, एकरस बनकर प्रभु चिन्तन का आनन्द ले सकता है।** अत: जीवन की हर समस्या के समाधान हेतु कर्मगति को बुद्धि में रखना ज़रूरी है। ❖

क्रोध बने अवरोध

ब्र.कु. घमंडी लाल, गुड़गाँव

एक-दूसरे से रोज़ाना
लेता है प्रतिशोध
क्रोध बने अवरोध प्रगति में
क्रोध बने अवरोध।
खा जाता है सद्गुण सारे
जोड़ा करे बुराई
अपना कद ऊँचा करने को
सम्मुख रखे सफाई
होने देता नहीं भूलकर
भले-बुरे का बोध
क्रोध बने .....
अपनी मनमानी में जीता
अपने मन की करता
चाहे कितना बलशाली हो
नहीं किसी से डरता
उस पर हुआ आक्रमण इसका
जिसने किया विरोध
क्रोध बने .....
प्यारा नहीं किसी को यह तो
कौन इसे समझाये
सच पूछो तो इस दुनिया में
क्रोध प्यार को खाये
जीवन बने सार्थक यदि तुम
करो क्रोध पर शोध
क्रोध बने .....
क्रोध आग है एक तरह की
भस्म करे जीवन को
धूँ धूँ करके स्वाहा कर दे
मुस्काते उपवन को
कह दो तुम अलविदा क्रोध को
बस इतना अनुरोध
क्रोध बने .....